ओंकार आदर्श चरित माला की २७ वीं पुस्तक

पं० मदन मोहन मालवीय

संस्थापक

पं० ओङ्कारनाथ वाजपेयी

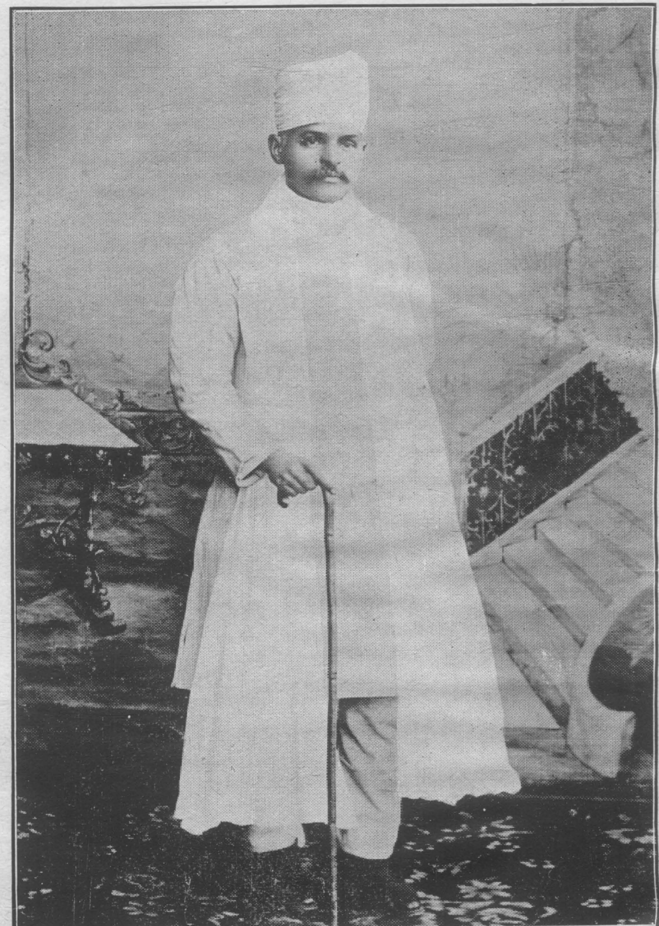

माननीय पं० मदनमोहन मालवीय ।

Onkar Press Allahabad.

ओंकार आदर्श चरित माला की २७ वीं पुस्तक

माननीय पं. मदन मोहन मालवीय

का

जीवन चरित्र ।

लेखक

पं० नन्दकिशोर द्विवेदी, एम. ए.

पण्डित काशीनाथ बाजपेयी द्वारा प्रकाशित व मुद्रित

ओंकार प्रेस,

प्रयाग ।

मूल्य ।=)

भूमिका

संसार में विश्वव्यापी युद्ध ने बड़े २ परिवर्तन कर दिये। परिवर्तन होना प्राकृतिक नियम है। कल जहां रूस, जर्मनी, और आस्ट्रिया में बादशाहों का मनमाना शासन था वहां आज प्रजा सत्तात्मक राज्य स्थापित हो गया। कल जहां शक्ति ही न्याय और नीति थी वहीं आज प्रत्येक देश के लिये अपना स्वयं शासन स्थापित करने की नीति स्थिर की जा रही है। संसार के बड़े २ हेर फेर महापुरुषों के विचार और कार्य का ही फल हुवा करते हैं। देश का इतिहास नेताओं के विचार और कार्यों की ही कहानी है।

ऐसे ही एक महापुरुष की जीवनी आप के सन्मुख है। श्रीमान् मालवीय जी ने अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुवे भारतवर्ष की बहुत बड़ी सेवा की है। अनेक बाधाओं को हटा कर, कई शक्तियों को एक ओर ही लगा कर, राजा और प्रजा, अमीर और गरीब सब की सहानुभूति लेकर श्रीमान् मालवीय जी ने हिन्दूविश्वविद्यालय स्थापित किया। भारतीय व्यवस्थापक सभा में अपनी प्रमाण सहित दलीलों द्वारा भारत सरकार की नीति में बहुत कुछ परिवर्त्तन कर देश की सेवा की। श्रीमान् मालवीय जी ने सन् १९१७ के आंदोलन में अग्र-सर होकर देश को दमन नीति से बचाया। धन राशि की इच्छा न कर अपना समस्त जीवन देशोपकारी कार्यों में लगाने में उन्होंने सदैव सुख माना है। देश सेवा में ही मान और देश के लिये कष्ट सहने ही में उन्होंने आनन्द माना है। अपने पवित्र जीवन, और अपनी निर्भीकता व सत्यता से वे आज समस्त भारतवर्ष के आदर्श बन रहे हैं।

भारतवासियों ने श्रीमान् मालवीय जी को पहले १९०९ में

लाहौर कांग्रेस का सभापति चुना था। उस समय भी नये सुधारों की आलोचना हो रही थी। १६१८ में वैसी ही परन्तु उनसे कहीं अधिक महत्व वाली दशायें फिर उपस्थित हैं। भारतसचिव ने सुधारों का एक मसविदा हमारे सामने पेश किया है। युद्ध के बाद वृटिश साम्राज्य का नया संगठन होगा। भारतवर्ष का क्या स्थान रहेगा? उपनिवेशों की भांति वृटिश छत्र छाया में हम भी एक स्वाधीन राष्ट्र बन कर रहेंगे याकि ऐसी ही दशा में? बस ऐसे ही गंभीर प्रश्न हमारे देश में उपस्थित हैं। हमारी योग्यता धैर्य और साहस पर ही इन प्रश्नों का निपटारा है। इसी कारण भारतवासियों ने १६१८ में होने वाली दिल्ली की कांग्रेस के लिये सर्व सम्मति से श्रीमान् मालवीय जी को दूसरी बार सभापति बनाया है। एक बार से अधिक, फिर ऐसे कठिन समय में सभापति बनने का इनेगिने ही महानुभावों को प्राप्त हो सका है।

आइये ऐसे महापुरुष की जीवनी से कुछ लाभ उठावें उनके पद चिन्हों पर चल कर अपना जन्म सुफल करें और देश की थोड़ी बहुत भी दशा सुधार कर अपने भाइयों को सुखी देखने के आनन्द का अनुभव करें।

इस पुस्तक के लिखने में मुझे स्थानीय "भारत सेवक समिति" की लाइब्रेरी से और अपने मित्र पं० शीतलाचरण वाजपेयी बी० ए० एल एल० बी० और पं० यदुनन्दन प्रसाद जी मिश्र बी० ए० से बहुत कुछ सहायता मिली है। अतएव मैं उक्त लाइब्रेरी के संस्थापक और अपने इन मित्रों का कृतज्ञ हूं।

प्रयाग
२३ दिसंबर १६१८

नन्दकिशोर द्विवेदी

परम पूज्यपाद

श्रीमान् पिता जी के चरण कमलों

में

सादर समर्पित ।

चरण सेवक,

प्यारा पुत्र

पंडित मदन मोहन मालवीय

पहला अध्याय

बाल्यकाल और शिक्षा

माननीय पंडित मदन मोहन मालवीय का जन्म प्रयाग के प्राचीन और प्रतिष्ठित मालवीय ब्राह्मण कुल में हुवा है। लगभग चार सौ वर्ष हुवे कि कुछ मालवीय ब्राह्मण मालवा से आकर संयुक्त प्रांत में बस गये थे। जिस कुल को हमारे चरित्र नायक के जन्म का गौरव प्राप्त है वह कुल पहले बुंदेलखंड में झांसी से थोड़ी दूर एक गांव में बसा था। उस गांव से पंडित मदनमोहन मालवीय के पूर्वज पवित्र तीर्थ राज्य प्रयाग में आकर बस गये। संयुक्त प्रांत में काशी, प्रयाग, और मिर्जापूर में आज कल भी कई प्रतिष्ठित मालवीय ब्राह्मण कुल हैं।

प्रयाग के मालवीय कुल में संस्कृत के कई अच्छे २ विद्वान लेखक, और शास्त्रज्ञ प्रसिद्ध पंडित होते आये हैं। माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय के पितामह पंडित प्रेमधर मालवीय अपने पांडित्य और विद्वता के लिये प्रयाग में प्रसिद्ध थे। पंडित प्रेमधर मालवीय के पुत्र पंडित बृजनाथ

मालवीय अपनी विद्वता, न्यायप्रियता, और मंजुभाषिता के लिये संयुक्त प्रांत के राजा महाराजाओं के यहां उच्च आदर पाये हुवे थे। पंडित वृजनाथ जी श्रीमद्भागवत की कथा व अन्य पुराण ऐसी उत्तम और मधुर रीति से बांचते और उनका अर्थ समझाते थे कि अपनी हृदय ग्राहणी मंजुभाषा के कारण पंडित जी ने बड़ी ख्याति और प्रतिष्ठा प्राप्तकर ली थी। दरभंगा और काशी के स्वर्गीय महाराजा पंडित वृजनाथ जी को उनकी विद्वता, शिष्ठता, और धर्माचरण के कारण गुरू करके ही मानते थे। पंडित वृजनाथ जी ने संस्कृत में कई उत्तम ग्रंथ लिखे हैं, जिनमें से कुछ ग्रंथों को उनके सुयोग्य पुत्र पंडित मदनमोहन मालवीय जी ने हाल ही में प्रकाशित कराया है। इन ग्रंथों में सिद्धांत दर्पण (प्रकाशक अभ्युदय प्रेस प्रयाग) का संस्कृत के विद्वानों में विशेष आदर है।

पंडित वृजनाथ मालवीय के तीन पुत्र हुवे। श्रीमान् मालवीय जी इन सब में छोटे हैं। आपका जन्म २५ दिसंबर सन् १८६१ ईसवी को प्रयाग में हुवा था। पंडित वृजनाथ जी बड़े ही विद्याप्रेमी थे। उनकी यह इच्छा थी कि संस्कृत की उच्च शिक्षा देने के बाद वे अपने पुत्रों को उच्च अंग्रेजी शिक्षा भी प्राप्त करावेंगे। परन्तु संसार में लक्ष्मी और सरस्वती का एक ही घर में निवास बहुधा कम देखा जाता है। पंडित वृजनाथ जी अपनी संतान को अंगरेजी की उच्च शिक्षा तो दिलवाना चाहते थे परन्तु एक ओर तो बड़े कुटुंब के समुचित प्रबंध का भार और दूसरी ओर पुत्रों को संस्कृत की शिक्षा के उपरान्त उच्च अंगरेजी शिक्षा देने की दृढ़ इच्छा

उन्हें कभी २ क्षण भर के लिये चिन्तित कर दिया करती थी। परन्तु धन्य है उस पैतृक प्रेम को कि जोपुत्र की शुभचिंतना के आगे संसार के अन्य सब सुख और दुख को क्षणिक कर फीका कर देता है।

उस काल में कि जब गदर के बाद भारतीय साम्राज्य ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथ से निकल कर स्वनाम धन्या महारानी विक्टोरिया के हाथ में पहुंचा ही था और न्याय शीला दयालु महारानी विक्टोरिया के अनुरोध से भारतवर्ष में अंगरेजी शिक्षा का प्रचार उत्तम और विधिवत रीति से आरंभ ही हुवा था पंडित बृजनाथ जी ने अंगरेजी शिक्षा का महत्व समझ लिया था। वे दूरदर्शी थे उनकी इस सूझ के लिये हमारा भारतवर्ष उनका सदैव अनुग्रहीत रहेगा। कुटुंब की आर्थिक दशा इस योग्य न होने पर भी पंडित जी ने अपने पुत्रों को अंगरेजी शिक्षा दिलवाई, और इस उद्देश की पूर्ति के लिये पंडित जी को कुछ साधारण कठिनाइयों और चिन्ताओं का सामना नहीं करना पड़ा था। ईश्वर को अनेक धन्यवाद है कि जिसकी कृपा से पंडित बृजनाथ जी ने बड़ी उमर पाई थी। वे अपने जीवन काल में अपने सुयोग्य पुत्र की पवित्र कीर्ति का परमानन्द लाभ कर सके। पंडित बृजनाथ जी का सन् १६०८ में स्वर्गवास हुवा।

आरंभ में बालक मदनमोहन की शिक्षा संस्कृत और देवनागरी में पूज्य पिता जी द्वारा घर पर ही होती रही। परन्तु इस क्रम में बाधायें पड़ते देख पंडित बृजनाथ जी ने बालक मदनमोहन को पहले 'धर्म ज्ञानोपदेश पाठशाला' में और फिर 'विद्या-धर्म-प्रबर्धनी सभा' के संस्कृत पाठशाला में भेजना

आरंभ किया। संस्कृत की आवश्यकीय शिक्षा पूर्ण हो जाने पर बालक मदनमोहन का नाम इलाहाबाद के अंगरेजी जिला स्कूल में लिखाया गया। जिला स्कूल से सन् १८७९ में कलकत्ता विश्वविद्यालय (तब प्रयाग विश्वविद्यालय स्थापित न हुवा था) की इंट्रेंस परीक्षा पास करके पंडित मदनमोहन मालवीय ने म्योर सेंट्रल कालेज में विद्याध्ययन आरंभ किया। म्योर सेंट्रल कालेज में इस समय हैरीसन साहेब प्रिंसपल थे।

स्कूल में पंडित मदनमोहन मालवीय का विद्यार्थी जीवन साधारण ही था। परन्तु कालेज के जीवन में इनकी स्वाभाविक उच्चाभिलाषा, सत्यप्रियता, धीरता, दृढ़प्रतिज्ञता और देशानुराग के चिन्ह देख पड़ने लगे थे। प्रिन्सपल हैरीसन अपने शिष्य के देशानुराग से भरे हुवे उच्च भाव देख कर प्रसन्न होते थे। और होनहार शिष्य के प्रति अपनी सदिच्छाएं प्रगट किया करते थे।

कालेज में पंडित मदनमोहन मालवीय को महामहोपाध्याय पंडित आदित्यराम भट्टाचार्य जी के पास संस्कृत पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुवा। पंडित मदनमोहन मालवीय ने कालेज में आने के पहले ही संस्कृत का बहुत कुछ ज्ञान घर ही पर प्राप्त कर लिया था। महामहोपाध्याय जी पंडित मदनमोहन मालवीय की संस्कृत शिक्षा से प्रसन्न थे और अपने शिष्य में उच्च अभिलाषायें देख कर इन पर वे बड़े सन्तुष्ट रहते थे। जहां एक ही नेम और एक ही धर्म होता है वहां आपस में श्रद्धा और प्रेम की मात्रा दिन पर दिन बढ़ती ही जाती है। महामहोपाध्याय जी सरकारी नौकर होने पर भी राजनैतिक

कार्यों में पूर्ण रूप से भाग लेते थे, वे कांग्रेस में बराबर शामिल होते थे। अपने शिष्य में देशानुराग की असाधारण मात्रा देख कर उनकी श्रद्धा पंडित मदनमोहन मालवीय पर दिन पर दिन अधिक ही बढ़ती गई ; श्रीमान मालवीय जी स्वदेश प्रेमी, धर्मानुरागी सुयोग्य गुरू पाकर अपना सौभाग्य मानने लगे। तब से बराबर मालवीय जी महामहोपाध्याय जी को अपना गुरू मानते चले आते हैं। बड़े २ गहन विषयों पर अब तक श्रीमान मालवीय जी अपने गुरू की आज्ञा और परामर्श लेकर कार्य करते हैं।

म्योर सेंट्रल कालेज से श्रीमान मालवीय जी ने सन् १८८४ में बी० ए० की डिग्री प्राप्त की। विद्यार्थी होने पर भी आप सार्वजनिक कार्यों में व्यौहारिक भाग लिया करते थे। तब भी धार्मिक और शिक्षा सबंधी कामों में आपका विशेष अनुराग था। जब आप कालेज में पढ़ते थे आपने अन्य मित्रों की सहायता से इलाहाबाद में एक लिटरेरी इन्सटीट्यूट' और एक 'हिन्दू समाज' की स्थापना की थी।

दूसरा अध्याय

पत्र सम्पादन और सार्वजनिक कार्य

भारतवर्ष को ब्रिटिश राज्य छत्र के आधीन आये हुए लगभग दो सौ वर्ष हो चुके हैं। इस समय भारतवर्ष की आर्थिक दशा इस प्रकार है कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले कालेज के विद्यार्थियों में लगभग एक तिहाई बालक ऐसे घरों से आते हैं, कि जो अपना विद्यार्थी जीवन निश्चिंतता से व्यतीत कर सकते हैं। एक तिहाई विद्यार्थी ऐसे होते हैं कि जो साधारण रीति से नितान्त आवश्यक वस्तुओं का प्रयोग कर सकते हैं। शेष ऐसे विद्यार्थी होते हैं कि जिन्हें। कालेज की छात्र वृत्तियां और विद्या प्रेमियों की सहायता पर निर्भर रहना पड़ता है। हम नहीं कह सकते कि साठ वर्ष पहले देश की क्या दशा थी। परन्तु हमारे चरित्र नायक को बी० ए०, की डिग्री लेने के बाद ही कालेज की शिक्षा स्थगित करदेनी पड़ी।

इधर महामहोपाध्याय जी का अनुरोध और स्वंय की एम० ए०, परीक्षा पास करने की इच्छा, उधर पूज्य पाद पिता जी को अब कुछ आराम देने की उत्कट इच्छा, और गृह प्रबन्ध भार का अब क्षितिज पर देख पड़ना पण्डित मदनमोहन मालवीय के चित्त में बिकल्प डालने लगा। सन् १८८४ में गरमियों की छुट्टियों के बाद कालेज खुलने पर पण्डित

मदनमोहन मालवीय ने एम० ए०, क्लास में नाम लिखवाया, परन्तु दोही तीन महिने के बाद कुटुम्ब की आर्थिक दशा ने इनको कालेज छोड़ने के लिये बाध्य किया।

कालेज छोड़ने के बाद सन् १८८४ में श्रीमान पण्डित मदनमोहन मालवीय इलाहाबाद जिला स्कूल में असिस्टेन्ट मास्टर नियुक्त होगये। इस स्थान पर आपने लगभग तीन वर्ष काम किया। आरम्भ में आपको पचास रुपया मासिक वेतन मिलता रहा, परन्तु फिर दो ही वर्ष बाद आप की कार्य कुशलता और आपके परिश्रम से प्रसन्न हो शिक्षा-विभाग ने आप का वेतन ७५) मासिक कर दिया। प्रयाग के सुयोग्य वकील स्वर्गवासी डाकृर सतीषचन्द्र बेनर्जी इस समय आपके शिष्य थे।

सन् १८८५ में (राष्ट्रीय महासभा) इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई। सन् १८८६ में कांग्रेस की दूसरी बैठक कलकत्ते में भारतवर्ष में राष्ट्रीय जीवन के जन्म दाता श्रीमान दादा भाई नौरोजी की अध्यक्षता में हुई। उन दिनों में सरकारी कर्मचारियों को राजनैतिक कार्यों में भाग लेने की मनाही नहीं थी। पंडित मदन मोहन मालवीय अपने गुरु महामहोपाध्याय पण्डित आदित्यराम जी भट्टाचार्य के साथ कलकत्ते जाकर कांग्रेस में सम्मलित हुए। इस कांग्रेस का विशेष महत्वपूर्ण विवरण पाठक आगे पढ़ेंगे।

कांग्रेस में कालाकांकर (अवध) के उदार और परम उन्नतशील ताल्लुकेदार राजा रामपाल सिंह से पण्डित मदन मोहन मालवीय से परिचय हो गया। राजा साहेब ने इन दिनों प्रजा में राज्य भक्ति और राज्य नैतिक व

सामाजिक उन्नति के प्रचार के लिये कालाकांकर से 'हिन्दुस्तान' नामी हिन्दी में एक दैनिक पत्र निकाला था। राजा साहेब पत्र के उचित प्रबन्ध, योग्य सम्पादन और उसे सर्व साधारण का प्रिय बनाने के लिये एक विद्वान और कार्य कुशल सज्जन की तलाश में थे। कांग्रेस में जब राजा साहेब का पंडित मदन मोहन मालवीय से परिचय हुआ राजा साहेब पण्डित जी का उत्साह सत्य प्रियता, और विचार स्वातन्त्र्य देखकर बहुत प्रसन्न हुये। और पंडित जी से अपने पत्र का सम्पादक बनने के लिये अनुरोध किया।

पंडित मदन मोहन मालवीय ने एक प्रसिद्ध दैनिक पत्र के सम्पादक बनने में देश सेवा का समुचित अवसर देख राजा साहेब की बात स्वीकार करली। स्कूल की सरकारी नौकरी से इस्तीफा दे 'हिन्दुस्तान' का सम्पादन सन् १८८७ के मध्य से आरम्भ कर दिया। पण्डित मदन मोहन मालवीय में देश प्रेम, देश सेवा का उत्साह, और अपने दीन भारतवासियों के लिये दया बाल्यावस्था सेही थी। वे चाहे जिस पद पर होते, या चाहे जिस अवस्था में होते उनकी वह देश प्रेम में रंगी हुई प्रकृति निश्चय ही देश की दशा में कुछ न कुछ परिवर्तन करती। परन्तु तब भी यह कहना ठीक है कि उनके जीवन में इस परिवर्तन से बहुत बड़ा असर पड़ा। शिक्षा विभाग में रह कर अधिक से अधिक वे आज स्कूलों के इन्स्पेक्टर या किसी जिला स्कूल के हेड मास्टर हो पाते। परन्तु उनसे तो भारत वर्ष की राजनैतिक स्थिति में एक बड़ा परिवर्तन होने को था। धन्य है राजारामपाल सिंह को कि जिनने ऐसे नर रत्न

को अविकसित दशा में भी पहचान लिया । पंडित मदनमोहन मालवीय दो सौ रुपये मासिक पर 'हिन्दुस्तान' का सम्पादन बड़ी ही योग्यता से करते रहे । श्रीमान मालवीय जी के सम्पादक होने से पत्र का मान प्रांत में बढ़ गया । पत्र की ग्राहक संख्या बढ़ गई । श्रीमान मालवीय जी के गम्भीर राजनैतिक प्रश्नों पर न्याय संगत निश्पक्ष लेख जनता में बड़े चाव से पढ़े जाने लगे । पत्र की प्रतिष्ठा जनता और सरकार दोनों में बढ़ गई । प्रांतीय सरकार ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट में इस पत्र की बहुत प्रशंसा की थी ।

इन्हीं दिनों प्रसिद्ध देश-भक्त पंडित अयोध्यानाथ जी ने प्रयाग से "इंडियन यूनीयन' नामी अंग्रेजी पत्र निकलना आरम्भ किया । पंडित अयोध्यानाथ जी को देशहित संबन्धी अनेक कार्य्यों के कारण पत्र के प्रबन्ध के लिये आवश्यकीय समय न मिल सकता था । पंडित अयोध्यानाथ जी ने अपने राज नैतिक शिष्य पंडित मदन मोहन मालवीय को कालाकांकर से प्रयाग में आकर रहने की आज्ञा दी । पंडित मदनमोहन मालवीय 'हिन्दुस्तान' का सम्पादन छोड़ कर प्रयाग में 'इन्डियन यूनियन' का सम्पादन करने लगे । 'इन्डियन यूनियन' का सम्पादन श्रीमान मालवीय जी कई वर्षों तक करते रहे ।

लोक मत स्थिर करना, प्रजा के विचारों तथा उनकी शिकायतों, और आवश्यकताओं को सरकार के सन्मुख रखना, तथा सरकार के विचारों को प्रजा को समझाना इत्यादि समाचार पत्रों के मुख्य कर्तव्य हैं । प्रजा में सरकार के प्रति संतोष श्रद्धा और विश्वास का प्रचार करने के लिये

छोटे सरकारी अफ़सरों को मनमानी करने से रोकने के लिये और सरकारी कामों की निशपक्ष आलोचना करने के लिये समाचार पत्र सर्वोत्तम साधन है। श्रीमान मालवीय जी ने 'हिन्दुस्तान' और 'इन्डियन यूनियन' का सम्पादन कर संयुक्त प्रान्त में लोकमत स्थिर किया और प्रांत में राजनैतिक जीवन का संचार किया।

अभी थोड़े ही वर्ष हुये जब कि देश में जोर का राजनैतिक आन्दोलन हो रहा था, और जोशीली वक्तताएं सुनने और जोशीले लेख पढ़ने के कारण, जोश में आकर अवैध आन्दोलन की ओर अन्य प्रान्त के नवयुवक बढ़ रहे थे, संयुक्त प्रांत में श्रीमान मालवीय जीने प्रयाग से प्रसिद्ध पत्र "अभ्युदय" सन् १६०८ से निकालना आरम्भ किया। इस पत्र के द्वारा श्रीमान मालवीय जी ने जनता को वैध आन्दोलन में रहने के नीति और सरकार को प्रजा में असन्तोष फैलने के प्रधान कारण और उनको सुधार द्वारा मिटाने के उदार उपाय बतलाये। इस पत्र को चलाने में श्रीमान मालवीय जी ने अपना बहुत समय और बहुत सा धन लगाया। अनेक कठिनाइयां पड़ने पर भी श्रीमान मालवीय जी मातृभाषा के राष्ट्रीय पत्र "अभ्युदय" को बराबर चलाते रहे। उन्हीं के प्रयत्न का यह फल है कि राष्ट्रभाषा का प्रसिद्ध राजनैतिक पत्र अनेक कठिनाइयां पार कर आज हिन्दी भाषा भाषियों की उच्च सेवा कर रहा है।

पिछले वर्षों में संयुक्त प्रांत में राजनैतिक आन्दोलन के लिये एक प्रभाव शाली अंग्रेजी पत्र की आवश्यकता जान पड़ी थी। इस समय प्रांत को इस कमी को पूरा करने के

विचार से श्रीमान मालवीय जीने अपने मित्रों की साहयता से अंग्रेजी में दैनिक पत्र 'लीडर' प्रयाग से निकालना आरम्भ किया। पिछले वर्षों में 'लीडर' ने संयुक्त प्रांत की राजनैतिक जाग्रति में जो सराहनीय भाग लिया है वह किसी से छिपा नहीं है।

सन् १९१० में हिन्दी में कई मासिक पत्र निकलते थे परन्तु इन पत्रों में ऐसा कोई भी पत्र नहीं था कि जो राजनैतिक विषयों पर गम्भीर और योग्यता पूर्ण लेख निकाल कर देश के राजनैतिक ज्ञान और साहित्य की वृद्धि करता। सामयिक राजनैतिक प्रश्नोंकी आलोचना साप्ताहिक या दैनिक पत्र किया करते हैं। परन्तु अङ्गरेजी में कई ऐसे राजनैतिक पत्र मासिक पुस्तकाकार निकलते हैं कि जिनमें गम्भीर राजनैतिक समस्यायों पर योग्यता पूर्ण निबन्ध योग्य लेखकों द्वारा, अनुभव और अध्ययन की सहायता से लिखे जाते हैं। ऐसे पत्रों द्वारा जनता में राजनैतिक समस्याओं के सच्चे ज्ञान का प्रचार होता है और राजनैतिक अध्ययन की जनता में रुचि बढ़ती है। इसी उद्देश से श्रीमान् मालवीय जी ने हिन्दी में प्रयाग से सन् १९१० में 'मर्यादा' निकलवाने का प्रबन्ध किया। यह मासिक पत्रिका भी हिन्दी भाषा भाषियों की सेवा कर रही है।

जब श्रीमान् मालवीय जी 'हिन्दुस्तान' का सम्पादन करते थे। प्रसिद्ध भारत हितैषी मिस्टर ऐलन आक्टोवियन ह्यूम ने श्रीमान् मालवीय जी को यह सलाह दी कि वे वकालत का इम्तहान पास कर के इलाहाबाद हाईकोर्ट में कुछ

माल वकालत करें जिससे प्रांत में उनका परिचय बढ़ जावे और वे देश सेवा के अधिक योग्य बन जावें।

पंडित अयोध्यानाथ, पंडित सुन्दर लाल, और राजा रामपाल सिंह इत्यादि सब मित्रों ने श्रीमान् मालवीय जी से वकालत का इम्तहान पास करने के लिये अनुरोध किया। श्रीमान् मालवीय जी के हृदय में देश सेवा की इच्छा बाल्यावस्था से ही बहुत प्रबल थी, वकील बन धन संचय करने का विचार उनके पवित्र हृदय में कभी नहीं आया। मित्रों के अनुरोध और इस विचार के कारण कि कुछ दिन वकालत करने से राजनैतिक, शिक्षा सम्बन्धी, और धार्मिक कार्यों का क्षेत्र बढ़ जावेगा श्रीमान् मालवीय जी ने तब १८९१ में एल, एल, बी, की परीक्षा पास की। और सन् १८९३ से इलाहाबाद हाईकोर्ट में वकालत शुरू करदी।

श्रीमान् मालवीय जी ने जब वकालत आरम्भ करदी थी एक दिन पंडित अयोध्यानाथ जी ने मिस्टर ह्यूम से यह शिकायत की कि "जब से मदन मोहन मालवीय ने वकालत शुरू की कांग्रेस के लिये उन्हें अब समय कम मिलने लगा।" मिस्टर ह्यूम ने पंडित अयोध्यानाथ जी को उत्तर दिया "ठीक है। यही उचित है कि मालवीय कुछ दिन के लिये वकालतमें एकाग्रचित्त होकर लग जायँ।" मिस्टर ह्यूम ने पंडित अयोध्यानाथ जी की शिकायत के विषय में श्रीमान् मालवीय जी से कहा कि "मदनमोहन तुम्हें ईश्वर ने विलक्षण बुद्धि दी है। थोड़े दिन-केवल दस वर्ष वकालत में परिश्रम करलो तुम उच्च श्रेणी में पहुंच जावोगे। और तब देश के हित के लिए प्रतिष्ठा के कारण तुम्हारी उपयोगिता महान हो जावेगी। तब

तुम देश की उच्च सेवा कर सकोगे।" श्रीमान मालवीयजी को सार्वजनिक काम में इतना प्रेम और आत्मत्याग में इतना सुख है कि वकालत आरम्भ करने पर भी जहां तक संभव हुवा वे सदैव लोग हितकार्यों में लगे रहे। उनका अधिक समय बहुधा सार्वजनिक कामों में ही लगता रहा। उन्होंने सदैव देश की सेवा और भारत वासियों के हित के कार्य करने में ही अपनी शक्ति और अपना समय लगाया। अन्य मनुष्यों के समान धन संचय, या परिजनों के लिये बड़ी सम्पत्ति एकत्रित करने का विचार उन्हें कभी अपने पवित्र उद्देश से डिगा नहीं सका। इलाहाबाद हाईकोर्ट के एक प्रतिष्ठित जजने कहा था कि "Pandit Madan Mohan Malviya has the ball before his feet, but he refuses to kick it." (पंडित मदनमोहन मालवीय के पैरों के सामने गेंद है परन्तु वे उसे ठोकर मार आगे बढ़ाने से इन्कार करते हैं।)

श्रीमान् मालवीय जी के आत्मत्याग और देश हित के कठिन परिश्रम से मुग्ध हो श्रीमती एनी बिसन्ट ने ३१ जनवरी सन् १९१२ को काशी में वक्तृता देते हुये कहा था कि "आपने अपना संसारिक जीवन व अपनी सब शक्ति, अपनी बिलक्षण वाणी, क्या कहा जाय–अपना समस्त जीवन और अपना स्वास्थ तक इस महत् कार्य (हिन्दू विश्वविद्यालय) में लगा दिया है।"

माननीय मालवीय जी विद्यार्थी समाज से विशेष प्रेम रखते हैं। राजनैतिक कार्य में इतने अधिक लगे रहने पर भी यदि कोई विद्यार्थी उनसे मिलने जाता है तो उससे वे बड़े

प्रेम से मिलते हैं और उसे उचित उपदेश देते हैं। यह हम पहले लिख चुके हैं कि 'इलाहाबाद लिटरेरी इन्सटीट्यूट' इनकी पहली क्रीडास्थल थी। फिर इन्होंने 'इलाहाबाद हिन्दू समाज, स्थापित किया। और उसमें बड़ी ही क्रिया शीलता और योग्यता से काम कर प्रयाग में सार्वजनिक जीवन की पुष्टि की।

प्रयाग विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिये बाहर से आये हुये हिन्दू विद्यार्थियों को रहने का इलाहाबाद में बड़ा कष्ट था। इस कारण श्रीमान मालवीय जी ने यह निश्चय किया कि बाहर से आये हुये हिन्दू विद्यार्थियों के सुविधा के लिये एक आदर्श हिन्दू बोर्डिंग हाउस (छात्रालय) प्रयाग में बनाया जाय। इसके लिए आपने संयुक्त प्रांत में दौरा किया। और आप के परिश्रम का यह फल हुआ कि प्रयाग में हिन्दू विद्यार्थियों के लिए एक उत्तम हिन्दू बोर्डिंग हाउस बन गया। इस हिन्दू बोर्डिंग हाउस में लगभग २५० हिन्दू विद्यार्थी रह सकते हैं। इस छात्रालय का नाम मेकडानेल यूनीवर्सिटी हिन्दू बोर्डिंग हाउस है। इलाहाबाद में दर्शनीय इमारतों में से हिन्दू बोर्डिंग की विशाल इमारत भी एक दर्शनीय इमारत मानी जाती है। अढ़ाई सौ हिन्दू विद्यार्थियों के रहने के लिये भारतवर्ष के किसी शहर में ऐसा उत्तम और विशाल बोर्डिंग हाउस दूसरा नहीं है। संयुक्त प्रांत में यह आदर्श बोर्डिंग हाउस समझा जाता है।

श्रीमान् मालवीय जी के प्रयत्न से प्रयाग में "भारती भवन" नामक प्रसिद्ध पुस्तकालय कई वर्ष हुये जब खोला

गया था। इस पुस्तकालय में संस्कृत हिन्दी और अंग्रेजी के ग्रंथों का उत्तम संग्रह है।

संयुक्त प्रांत की राजधानी प्रयाग में ही सन् १८५७ के गदर के बाद महारानी विक्टोरिया के प्रतिनिधि वाइसराय लार्ड कैनिंग ने सन् १८५८ का प्रसिद्ध घोषणा पत्र गंगा यमुना के संगम पर किले के पास के मैदान में पढ़ा था। उस अवसर को चिरस्मर्णीय रखने के लिये इस स्थान पर श्रीमान् मालवीय जी के प्रयत्न से पब्लिक फंड द्वारा एक 'मिंटो पार्क' बनवाया गया है। और उस चिरस्मर्णीय घटना स्मारक स्वरूप उस स्थान पर अत्यन्त विशाल एक स्तम्भ स्थापित किया गया है और इस स्तम्भ पर महारानी विक्टोरिया के घोषणा पत्र का वह अंश उद्धृत है। कि जिसमें महारानी ने बिना किसी प्रकार के भेदभाव के माने भारत वासियों को सब प्रकार के उच्च पदों पर नियुक्त करने का वचन दिया था।

तीसरा अध्याय

राष्ट्र-भाषा हिन्दी

यद्यपि यह युक्ति न्याय संगत नहीं है कि जिस देश में कई भाषायें प्रचलित हैं उसे हम एक देश नहीं कह सकते अथवा जिस जाति में कई भाषाओं के बोलने वाले पाये जाते हैं उसे हम एक राष्ट्र नहीं कह सकते हैं। क्योंकि इस समय संसार में कई ऐसे देश हैं कि जिनमें न तो बोलने ही की एक भाषा है और न लिखने के लिये एक लिपि है। जैसे स्वीट्ज़रलैंड में दो भाषाये बोली जाती हैं। आस्ट्रिया हंगेरी में जरमन, इटालियन, फ्रेंच इत्यादि कई भाषायें, लिखी और बोली जाती हैं। रूस में रूसी, तुर्की, फ़ारसी, पश्तो, चीनी, इत्यादि कई भाषायें बोली जाती हैं। तिस पर भी यदि देश पूरी उन्नति करना चाहता है तो उसके लिये यह आवश्यक है कि देश में एक राष्ट्र भाषा हो। जब तक हम एक दूसरे से बात नहीं कर सकते, दूसरे के विचारों को नहीं समझ सकते, हम में प्रेम और एकता होना कठिन है। यदि मद्रास प्रांत के किसी नेता को पंजाब प्रांत वाले निमंत्रित करते हैं तो वहां उस नेता की वक्तृता अंगरेजी में होती है। अंगरेजी जानने वालों की संख्या हमारे देश में बहुत कम है। फल यह होता है कि उस वक्तृता से बहुत थोड़े शहर के पढ़े लिखे मनुष्य फायदा उठा सकते हैं। पंजाब का कारीगर यदि

मैसूर राज्य में पहुंच जाता है तो वहां उसे दूसरी भाषा होने के कारण बड़ी कठिनाई उठानी पड़ती है। देश में सामाजिक अथवा राजनैतिक आन्दोलन के लिये भाषा के कारण अनेक कठिनाइयां पड़ती हैं। उत्तम पुस्तकें और समाचार पत्र विदेशी भाषा में छपने के कारण जनता को उनसे बहुत कम लाभ होता है। कृषि-विभाग और औद्योगिक विभाग की रिपोर्ट अंगरेजी में छपा करती हैं। किसानों में तो शायद हा देश भर में कोई किसान ऐसा हो जो पूसा और कानपूर के कृषि कालेजों से अंग्रेजो में निकली हुई रिपोर्टों से फायदा उठा सकता हो। देशी कारीगरियों के सम्बन्ध में निकली हुई रिपोर्टों से हमारे देशी कारीगर कोई लाभ नहीं उठा पाते। प्लेग, चेचक, बुखार इत्यादि रोगों को दूर करने के लिये पूना और कसौली से निकली हुई रिपोर्टों का जन साधारण को पता ही नहीं रहता उन्हें पढ़ कर फायदा उठाना तो दूर रहा। यदि आज राजा और प्रजा की एक भाषा होती तो यही सरकारी रिपोर्टें राष्ट्रीय भाषा में छपतीं लाखों और करोड़ों की संख्या में बिकतीं। धनी, रईस स्वदेश प्रेमी सज्जन कृषी और स्वास्थ्य सम्बन्धी सस्ती पुस्तिकायें लाखों की संख्या में अपने गावों में मुफ्त बांटते अथवा पढ़कर सुनाने का प्रबन्ध करते और इस प्रकार देश की कृषि और कारीगरी की उन्नति होने का कुछ आशा होती। देश में रोगों ने घर कर लिया। देश वासियों की औसत उमर अन्य देशों की अपेक्षा आधी हो रही है *। जब तक

* फी मनुष्य औसत जीवन की आशा इङ्गलैंड में ४३ वर्ष और भारत वष में २३ वर्ष है।

जनता में रोगों से बचने की विधि और साफ स्वच्छ रहने की तरकीबें देशी भाषा में छोटी २ पुस्तकें छाप कर न बांटी जावेंगी इन व्याधियों से छुट्टी पाने की बहुत कम आशा है।

राष्ट्र के संगठन के लिये राष्ट्र भाषा एक दृढ़ साधन है। पंडित मदनमोहन मालवीय ने राष्ट्र-निर्माण के लिये एक भाषा कितनी आवश्यक और कितना दृढ़ साधन है यह सब से पहले समझा। मालवीय जी से पहिले भी हिन्दी की सेवा और उसकी उन्नति चाहने वाले अनेक योग्य महानुभाव हो गये हैं। परन्तु उनका हिन्दी से प्रेम इसीलिये था कि हिन्दी उनकी मात्र भाषा है और मात्र भाषा के साहित्य की बृद्धि करना उन्हों ने अपना कर्तव्य समझा था। परन्तु मालवीय जी का हिन्दी से सम्बन्ध इसलिये नहीं रहा कि वे हिन्दू हैं इसलिये हिन्दी की उन्नति चाहें, या कि उनकी मातृ भाषा हिन्दी है इसलिये हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने का प्रयत्न करें, अथवा हिन्दी का संस्कृत से घनिष्ट सम्बन्ध है इसलिये शायद कभी हिन्दी की उन्नति होते २ संस्कृत फिर देश भाषा होजावे। अथवा हिन्दी के प्रचार से हिन्दू धर्म के प्रचार में सुगमता होगी, अथवा हिन्दी के प्रचार से किसी जाति विशेष को लाभ पहुंचेगा—यह सब संकुचित हृदयों में आने वाले विचार हैं। एक ऐसी पवित्र आत्मा के लिये कि जिसने संसार के सुख सम्पति से मुंह मोड़ कर देश की चिन्ता में व्यग्र रहकर अनेक कठिनाइयां और आपत्तियां सहने पर भी यावत जीवन देश की सेवा करना ही जीवन का एक मात्र उद्देश्य समझा है ऐसे विचार सोचना महा पाप है। मालवीय जी का उद्देश्य एक

हैं—राष्ट्र निर्माण । हिन्दी भाषा ही उन्हें ऐसी जान पड़ी कि जो सारे भारतवर्ष की भाषा होने योग्य है इसीलिये उन्होंने उसकी उन्नति करना अपना धर्म समझा।

कालेज से निकलते ही दैनिक हिन्दुस्तानी का सम्पादन कर हिन्दी का प्रचार किया। "जिस समय मालवीय जी ने हिन्दी की उन्नति का यत्न करना आरंभ किया था उन दिनों हिन्दी के जानने वाले बहुत थोड़े थे, उन दिनों हिन्दी की उन्नति का यत्न करने में हिन्दी सेवियों को अगणित असुविधायों का सामना करना पड़ता था। मालवीय जी उन दिनों हिन्दी की उन्नति के संबध में हिन्दी में बहुतेरी वक्तापें दिया करते थे।"*

संयुक्त प्रांत में इस समय कचहरी की भी भाषा उर्दू थी। जनता को इससे बहुत कष्ट था, क्योंकि संयुक्त प्रांत की अधिकांश जनता में हिन्दी का प्रचार था। पंडित मदनमोहन मालवीय ने प्रजा की इस असुविधा को समझ कर इसके मिटाने के लिये प्रांत में आन्दोलन किया और प्रांतीय सरकार को इस बात की आवश्यकता समझाई की प्रांत की प्रचलित भाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होने के कारण कचेहरियों का काम उर्दू के साथ २ हिन्दी में किया जाना चाहिये। कुछ लोगों ने मालवीय जी के इस प्रस्ताव का विरोध भी किया परन्तु योग्य लेफटीनेन्ट गवर्नर लार्ड मेकडानेल ने मालवीय जी के प्रस्ताव की उपयुक्तता और आवश्यकता समझ कर सन्

* पं० श्याम विहारी मिश्र एम० ए० भूतपूर्व दीवान छतरपूर स्टेट (बुंदेल खंड)

१६०० में यह कानून ज़ारी कर दिया कि कचहरी का काम हिन्दी या उर्दू किसी भी भाषा में किया जा सकता है।

हिन्दी भाषा भाषी लार्ड मेकडानेल की इस भलाई को कभी न भूलेंगे। मालवीय जी ने प्रजा की आवश्यकता समझ प्रांतीय सरकार से जिस प्रकार यह कानून पास कराया हिन्दी अक्षरों को कचहरी में स्थान दिलवाया है उसके लिये यह प्रांत ही नहीं वरन समस्त भारतवर्ष उनका कृतार्थ रहेगा। राष्ट्र भाषा बनने के लिये हिन्दी की यह विजय प्रथम है। अब हिन्दी का प्रचार दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है। गुजरात महाराष्ट्र और मद्रास में भी हिन्दी की चर्चा होने लगी है। बड़ौदा राज्य में हिन्दी ही में प्रारंभिक शिक्षा अनिवार्य है। ग्वालियर में सरकारी काम सब हिन्दी में होने लगा है। मध्यप्रदेश, राजपूताना, मालवा, विहार की भाषा हिन्दी है। पंजाब में हिन्दी प्रचार के लिये प्रयत्न किया जारहा है। बंगाल, महाराष्ट्री और मद्रासी सज्जनों ने हिन्दी राष्ट्रभाषा बनाने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है।

हिन्दी भाषा भाषियों के लिये बड़े ही सुख की बात है कि अब हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने की युक्ति और उपयोगिता महात्मा गांधी, और महात्मा तिलक और श्रीमती एनी बेसेंट ने मान ली है। श्रीयुत रमेशचन्द्रदत्त और श्रीयुत अरविंद-घोष पहले ही हिन्दी को राष्ट्र भाषा के योग्य मान चुके हैं। राष्ट्र भाषा में सन् १६०८ में श्रीमान मालवीय जी ने संयुक्त प्रांत की राजधानी प्रयाग से ' अभ्युदय ' निकालना आरंभ किया और सन् १६१० में ' मर्यादा ' नामी मासिक पत्रिका मालवीय जी ने इलाहाबाद से हिन्दी में निकलवाना आरम्भ

की। दोनों पत्र आज श्रीमान् मालवीय जी के निर्धारित किये हुवे मार्ग पर चलकर हिन्दी का प्रचार और देश की सेवा कर रहे हैं। पिछले वर्षों से हिन्दू विश्वविद्यालय और राज नैतिक कार्यों में लगे रहने के कारण मालवीय जी राष्ट्र भाषा हिन्दी की सेवा में उतना समय नहीं दे पाते हैं जितनी कि उनकी इच्छा रहती है जैसा कि उन्होंने झांसी में होने वाले सन् १६१६ के प्रांतीय साहित्य सम्मेलन में कहा था कि यद्यपि मै अन्य राजनैतिक कार्यों के कारण हिन्दी की सेवा में अपना समय विशेष रूप से नहीं लगा पाता हूं, परन्तु यह ध्यान रखिये कि हिन्दी से मेरा प्रेम पहले से अधिक ही है—जब कभी घंटे आधे घंटे की छुट्टी पाकर श्रीतुलसीकृत रामायण पढ़ने लगता हूं तो ढाई तीन घंटे सेकम में वह पुस्तक मेरे हाथ से नहीं छूटती है।

मालवीय जी का यह विचार है कि शिक्षा का माध्यम हमारी मातृ भाषा होना चाहिये। विदेशी भाषा में शिक्षा पाने के कारण हमारे बालकों की अमूल्य शक्ति वृथा में अंग्रेजी की शब्दावली रटते २ नष्ट होजाती है,उन्हें अधिक परिश्रम करना पड़ता है,और किसी एक विषय कोसीखने के लिये उन्हें ८-१० वर्षकेवल अंग्रेज़ी भाषा पढ़ने में लगाने पड़ते हैं तब वे उस विषय का अध्ययन करने के योग्य हो पाते हैं। वृथा के परिश्रम से हमारे बालकों की मौलिक शक्ति का ह्रास होजाता है।

मालवीय जी की इस हिन्दी सेवा के लिये हिन्दी प्रेमियों ने काशी में होने वाले प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन १६१० में मालवीय जी को ही सभापति बनाना निश्चय

किया था। मालवीय जी ने जो वक्तृता यहां पर दी थी वह सदैव पढ़ी जाने योग्य है। आपने हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा होने के लिये योग्य दिखला कर भविष्य में हिन्दी भाषा की निरन्तर उन्नति करना चाहिये यह दिखलाते हुये कहा था कि।

"जिस हिन्दी के लिखने वालों में चन्द्र कवि, तुलसी-दास, सूरदास, विहारी लाल, और बाबू हरिश्चन्द्र होगये हैं वह हिन्दी आज अपनी बहिनों के सामने आखें नीची किये खड़ी है। हिन्दी प्रेमियो तुम्हारे और हमारे लिये यह बड़ी लज्जा की बात है।

"सर एएटोनी मेकडानल का भला हो, उन्होंने यह आज्ञा दी कि कचहरियों में जो दरख्वास्तें दी जावें हिन्दी उर्दू दोनों में लिखी जावें। उस समय से हम लोग हिन्दी भाषा की विशेष उन्नति करने लगे हैं। जब रोगी दुर्बल हो सन्निपात की दशा को पहुंच जाता है, तब पहिले उसका ज्वर छुड़ाया जाता है फिर उसका आहार आदि ठीक किया जाता है, अन्त में यह पहाड़ हट गया। किन्तु बड़े धिक्कार और लज्जा की बात है कि यद्यपि यह पहाड़ हमारे मार्ग से काट कर हटा दिया गया तौभी हम लोगों ने आज तक इससे पूरा लाभ न उठाया। हम वकील मुख्तार, हम व्यापार करने वाले महाजन और वह लोग जो कचहरी में वकालत करते हैं और अपने हिन्दू भाइयों के मुकदमे में उनका धन व्यय कराते हैं, वे लोग भी हिन्दी भाषा की ओर से उदासीन हैं। कितने लोग हैं, जो जाति का उप कार करते हैं। कहते हैं कि जाति बिना भाषा जीवित नह

रह सकती, जैसे कि नाल के बिना बालक जीवित नहीं रह सकता। किन्तु क्या यह बात सत्य है? ज़रा बंगाली मराठी आदि को देखिये। हिन्दी भाषा में कितने लोग हैं जिनको इस बात से दुख और लज्जा होती है कि यह आर्य्यावर्त देश, जहां कि आप देखेंगे कि लाखों लोग ऐसे हैं जो अपनी माँ की बोली से परिचय नहीं रखते! सब आशा उन्नति की छोड़ दीजिये। उन्नति करने वालों के सामने खड़ा होना छोड़ दीजिये। जब तक आप इस लज्जा को न मिटावें, अपनी माँ की बोली न सीखें, तब तक आप मुंह न दिखावें। मातृभाषा के सीखने में कौन लज्जा करता है? अब आप लोग अपने हृदय में आज से इस बात का प्रण कर लें कि जब तक आप मातृभाषा को सीख न लेंगे तब तक आप मस्तक न ऊंचा करेंगे। कोई अङ्गरेज जो अङ्गरेज़ी भाषा से परिचित न हो या कोई और देश का पुरुष जो अपने देश की भाषा न जानता हो, क्या कभी गौरवान्वित हो सकता है? जब हमारी यह दशा है तब क्यों न इस भाषा की दुर्दशा होगी और क्यों न हम को औरों के सामने दुर्बलता स्वीकार करना पड़ेगी? यह सत्य है कि कुछ लोग अपनी मातृभाषा का काम करते हैं, किन्तु ऐसे लोग कितने हैं? मेरा यह प्रस्ताव नहीं है मेरा यह निवेदन है, कि जो हुवा वह हुवा; अब क्या करना चाहिये। आप को यह आवश्यक है, कि सरकारी दफ्तरों से जो नकलें ली जाती है, उनको आप हिन्दी में लें; जो डिगरियाँ तजबीजें आदि मिलती हैं, उनको आप हिन्दी में लें। यह सब आपके लिये आवश्यक है। गवर्मेन्ट ने आपको जो अवसर दिया है, उसे आप काम में नहीं लाते।

"इसके उपरान्त यह भी सत्य है कि आज तक इस कारण से आप के अङ्गरेजी पढ़ने वालों में केवल उर्दू का अधिक प्रचार है। अब मैं यह आशा करता हूं और सोचता हूं कि जब तक यह प्रचार रहेगा, तब तक हिन्दी भाषा की उन्नति में रुकावट रहेगी।

"उर्दू भाषा रहे; कोई बुद्धिमान पुरुष यह नहीं कह सकता कि उर्दू मिटजावे। यह अवश्य रहे और इसके मिटाने का विचार वैसाही अयोग्य है जैसा हिन्दी भाषा के मिटाने का। दोनों भाषायें आमिट हैं दोनों रहेंगी। उर्दू भाषा के प्रेमी करोड़ों हैं और इस पचास बर्ष में उन्होंने बहुत कुछ उन्नति की है मौलवी ज़काउल्ला साहब, मुहम्मद हुसेन आज़ाद और देहली के नज़ीर अहमद को लीजिये। उस शब्द कोष को लीजिये, जो हैदराबाद दक्खिन में छपकर तैय्यार हो गया है। हैदराबाद में मुसलमान भाई २५ वर्ष से उर्दू की उन्नति का बड़ा यत्न कर रहे हैं। हम को संतोष और सुख होता है कि मौलवी शिबली के काम से उसकी उन्नति में अधिकता हुई है, और उसकी उन्नति हमारे देश की उन्नति है। हम इसकी भलाई चाहते हैं, किन्तु इसी के साथ २ हमें यह भी कहना चाहिये, कि हिन्दी जानने वाले इस प्रान्त में बहुत पीछे हैं। पिछली मनुष्य गणना से जान पड़ा है कि एक उर्दू जानने वाला है तो चार हिन्दी जानने वाले हैं।

"मैंने आप से कहा कि राजा के सहारे से बड़ा सहारा होता है। यदि आप को, जैसे कि नागरी प्रचारिणी सभा के लिये गवर्मेंन्ट सहारा देती चली आई है राज सहाय्य मिले

तो काम बहुत कुछ बन जा सकता है। किन्तु बड़े दुख की बात यह है कि अङ्गरेज़ी गवर्मेन्ट ने इसका जितना प्रचार करना चाहा था हमारी उपेक्षा से उसका उतना प्रचार नहीं हुआ। हम लोगों को जितना करना चाहिये था, उसका सिर्फ कुछ अंश हमने किया। अब यह सम्मेलन ही विचार करे कि इसकी उन्नति का क्या उपाय होना चाहिये।

"हिन्दी भाषा की उन्नति की साधना के लिये अब क्या करना चाहिये? हिन्दी-भाषा की ऐसी स्थिति में इसकी उन्नति केलिये अब हमारा कर्त्तव्य क्या है इसके विषय में राज्य का सहारा है। यदि उसके लिये यत्न करेंगे, तो वह भी मिलेगा। जो मागाँ गया वह मिला। हमने कहा था कि कचहरियों की भाषा हिन्दी भी कर दी जावे, राज्य ने हमारे प्रदेशों में कचहरियों की भाषा हिन्दी भी करदी। इन दिनों इस देश में कचहरियों की जो भाषा है, वह हिन्दी है। यत्न और चेष्टा का प्रयोजक है, आदमी जिस बात के लिये यत्न और चेष्टा करता है वह हो जाती है; आदमी के लिये क्या असम्भव है? जो स्कूल कालेज स्थापित किये गये हैं, उनमें लड़के हिन्दी पढ़ें। युरोपीय इतिहास काव्य, कला कौशल आदि की पुस्तकें हिन्दी में अनुवादित हो। हिन्दी में उपयोगी पुस्तकों की संख्या बढ़ाई जावे। सरकार ने स्कूलों में हिन्दी जारी कर दी है; अब हमें चाहिये, कि हम हिन्दी की उत्तमोत्तम पाठ्य पुस्तकें तैय्यार करें। इस प्रदेश में अंगरेज़ी जानने वालों की कमी नहीं। बहुतेरे लोगों ने शेक्सपियर के काव्य समझकर देख डाले हैं; कितने ही लोग हैं जिन्होंने अंगरेज़ी कविता

की रचना को सीखा है। कितने ही लोग अंगरेज़ी में इतिहास लिखते हैं। परमेश्वर के अनुग्रह से इस देश के लोगों को अंगरेज़ी में बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ है। मैं चाहता हूं कि वह ज्ञान अपने ही तक न रखा जावे उसे हमें अपने भाइयों को भी देना चाहिये। उन भाइयों को भी देना चाहिये, जिनका अङ्गरेज़ी से परिचय नहीं।

"आप यह कह सकते हैं कि ऐसी पुस्तकों के पढ़ने वाले बहुत कम हैं। हिन्दी—पाठकों में ऐसी पुस्तकों के पढ़ने के नये अनुराग का संचार करना होगा। इसमें संदेह नहीं कि इस काम के लिये यत्न करना होगा। पाठकों के सामने का एक तरह का भोजन हटा दूसरी तरह का भोजन परोसना होगा। क्षुधा उत्पन्न हो चुकी है। बिना भोजन के काम न चलेगा। ईश्वर के परम अनुग्रह से पढ़ने का प्रेम बढ़ रहा है; हिन्दी का प्रेम बढ़ रहा है; हिन्दी पाठकों की संख्या अधिक हो रही है; पढ़ने का व्यसन बढ़ रहा है। लोगों को उचित है, कि वे, अब पढ़ाने के लिये पुस्तकें बनायें। जो लोग सहाय और सामर्थ्य होते भी काम नहीं करते, वे अपने कर्तव्य से उपेक्षा करते हैं।"

हिन्दी भाषा भाषियों को यह देखकर संतोष होगा कि पिछले दो तीन साल से हिन्दी में पुस्तकें तेज़ी के साथ निकल रहीं हैं। यदि प्रकाशक और लेखक महाशय इन पुस्तकों की भाषा के सम्बन्ध में मालवीय जी के नीचे दिये हुए वाक्या का ध्यान रखे तो वे हिन्दी के प्रचार में अधिक सहाय होंगे।

"पुस्तकों के लिखने में हमें भाषा की ओर ध्यान देना

होगा। हमें उचित है कि भाषा में जो दोष आ गये हैं उन्हें मिटावें। सरकार की ओर से जिन बातों के करने का हमें अवसर नहीं मिला है उन्हें हम सामने से हटा दें, किन्तु जिन बातों के करने का अवसर मिला है उसे क्यों न करें? हमें ऐसी भाषा लिखना चाहिये जिसे इस प्रांत के लोग समझ सकें। ...कहते दुख होता है कि सरकारी विज्ञापनों की जो नकलें छपती हैं वह हिन्दी भाषा में नहीं होती, हमीं लिखने वाले हैं, हम जैसी भाषा लिखते हैं वैसी ही भाषा चलती है ... यहां बहुत बड़ा दोष यह है कि लिखने की भाषा और है और बोलने की और, यह बहुत बड़ा दोष है; जैसी बातें कहिये वैसी ही लिखिये।

"सत्य कटु है; किन्तु सत्य ग्रहण करना चाहिये। हिन्दी भाषा की योग्यता रखने वाले बहुत थोड़े हैं। उर्दू की दशा बुरी है; किन्तु हिन्दी की और भी बुरी है। कहीं कहीं समासों के लच्छे के लच्छे लाये जाते हैं। कहीं कहीं ऐसे शब्द भरे जाते हैं, कि पढ़ने में तो भले हों किन्तु पढ़ने वालों को वेगाने जान पड़ें। कहीं कहीं ऐसे शब्द रखे जाते हैं कि पढ़ने वालों की समझ ही में नहीं आते। ... जो शब्द भाषा में चलते हैं और जिन्हें हम जानते हैं, उन्हीं को हमें पुस्तकों और समाचार पत्रों में लाना चाहिये।

"इस लिये भाषा की उन्नति करने में हमारा सर्व प्रधान कर्तव्य यह है कि हम स्वच्छ भाषा में हिन्दी लिखें। पुस्तकें भी ऐसी ही भाषा में लिखी जांय। ऐसा यत्न हो कि जिससे जो कुछ लिखा जावे, वह ऐसी ही भाषा में लिखा जाय। जब हम कोई काव्य माला लिखें, तो अलंकारिक भाषा से काम

लें। विज्ञानादि लिखने में पहले भाषा के शब्द लीजिये। जब भाषा में शब्द न मिलें, तब संस्कृत से लीजिये या बनाइये। भाषा का सुधार बड़ा ही प्रयोजनीय है। समाचार पत्रों और स्कूल की पुस्तकों में ऐसी भाषा चल जाने पर उसके प्रसार की राह खुलेगी। एक दिन यह भाषा राष्ट्र भाषा हो सकेगी।

"मद्रास, बंगाल, बम्बई आदि के अनेक विद्वान् देश में एक ही भाषा चलाना चाहते हैं। देश के बहुतेरे लोगों को जब रुचि है, तब आप का भी कर्तव्य है। आप भी ऐसा यत्न करें, जिससे आप भी भाषा राष्ट्र-भाषा होने का गौरव पायें। झगड़ों में फंसने के बदले उन्हें मिटाना चाहिये। उर्दू के प्रेमी कहते हैं, कि हिन्दी भाषा उर्दू भाषा है। यही सही। यदि आप झगड़ा मिटाना चाहते हैं तो कह दें कि अच्छा यही सही। वह उसे एक नाम से यदि पुकारना चाहते हैं तो पुकारने दीजिये, उसी में उन्हें संतोष करने दीजिये। और यह कीजिये कि हिन्दी में जो उर्दू—फारसी शब्द आगये हैं, उनका व्यवहार कर उर्दू वालों को और भी संतुष्ट कीजिये। आपकी हिन्दी में कितने ही शब्द ऐसे हैं जो देश की बहुतेरी भाषाओं में ज्यों के त्यों या कुछ बदले रूप में काम में लाये जाते हैं। आप उन शब्दों के व्यवहार में संकोच न कीजिये हमें यह देखना चाहिये कि हमारी भाषा के शब्द ऐसे हों जिनसे सब प्रदेश के लोग लाभ उठावें।"

हिन्दी का साहित्य हम कैसे बढ़ा सकते हैं इस विषय में मालवीय जी ने प्रथम साहित्य सम्मेलन की वक्तृता में कहा था कि—

"सभी भाषाओं में अनुवाद से कार्य आरंभ हुवा है। अंगरेजी भाषा आज दिन बहुत ही उन्नत दिखाई देती है; इसके साहित्य के सभी अङ्ग पूर्ण हैं। इसी अंगरेजी भाषा की पुष्टि पहले जर्मन आदि भाषाओं के अनुवाद से हुई है। हमें जगह जगह से और विभिन्न भाषाओं से अच्छे २ विचारों को चुनना चाहिये। हमे इस बात में अंगरेजों को अपना गुरू बनाना चाहिये और उनसे सहारा भी लेना चाहिये। देखिये अंगरेजों ने आपके प्रायः कुल प्राचीन ग्रंथों के अनुवाद कर डाले हैं। अंगरेजी भाषा का साहित्य अनुवादों से भरा हुवा है। आप अंगरेजी भाषा और देशी भाषा दोनों भाषाओं के ग्रंथों से सहारा ले सकते हैं।"

मालवीय जी बराबर हिन्दी की सेवा करते आये हैं, आज कल भी राजनैतिक कार्य और हिन्दू-विश्वविद्यालय के काम में इतने लगे रहने पर भी हिन्दी के सम्बन्ध में सब प्रकार की सम्मति देने के लिये उद्यत रहते हैं। पत्रसम्पादकों और पुस्तक प्रकाशकों को उनके कार्य्य के लिये उन्हें उत्साहित करते हैं और उन्हें उपयोगी और सामयिक सलाह देते हैं। "हिन्दी की जो उन्नति आज दिखाई पड़ती है उसमें मालवीय जी का उद्योग मुख्य है" * हिन्दी भाषा-भाषियों हमें भी थोड़ा या बहुत जो कुछ हम कर सकते हैं मातृ भाषा की सेवा करना चाहिये।

---

* पं० श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० दिवान छतरपुर स्टेट (बुन्देल खंड)

चौथा अध्याय

इन्डियन नेशनल कांग्रेस

(राष्ट्रीय महा-सभा)

सन् १८५८ के विप्लव के बाद भारतवर्ष का शासन ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथ से निकाल कर स्वनामधन्य स्वर्गवासनी महारानी विक्टोरिया ने अपने हाथ में ले लिया। और भारतीय प्रजा के पास महारानी विक्टोरिया ने यह संदेसा भेजा कि "यह हमारी इच्छा है कि हम अपनी प्रजा में जाति, और धर्म के कारण किसी प्रकार का भेद भाव न मानेंगे और अपनी प्रजा को शिक्षा योग्यता और सच्चरित्रता के अनुसार सब प्रकार की सरकारी नौकरियां निष्पक्षता से देगें।" "भारत का शासन हम भारतवासियों के हित के उद्देश से करेंगे। देश के समृद्धि में हम अपनी शक्ति समझेंगे, देशवासियों के संतोष में अपना सुख मानेंगे और उनकी कृतज्ञता को ही हम अपना गौरव मानेंगे।" ऐसी घोषणा सुन भारतीय प्रजा प्रसन्न हुई और महारानी विक्टोरिया की प्रजावत्सलता और ब्रिटिश जनता के न्याय में श्रद्धा कर संतोष और शांति से प्रजा ने भी ब्रिटिश छत्र को माथा नवाय सदैव के लिये उसकी राज भक्ति स्वीकार की देश में विश्वविद्यालय की स्थापना हुई, नये २ कालेज और स्कूल खुलने लगे। रेलें देश में बढ़ने लगीं। पुलिस

का प्रबन्ध अच्छा होने लगा । अकाल में सरकार प्रबन्ध करने लगी । नई २ नहरें निकालीं गई । न्यायालयों का ठीक २ प्रबन्ध किया गया। प्रजा को यह भान पड़ने लगा कि महारानी का राज्य सुख मय राज्य है ।

देश में शिक्षा का प्रचार बढ़ रहा था, योग्य भारतवासी महारानी विक्टोरिया के शब्दों पर श्रद्धा रख यह आशा कर रहे थे कि धीरे २ संसार के अन्य देशों की भांति स्वयं इङ्गलेंड की भांति भारतवासियों को भी ऊंचे २ ओहदे और देश के शासन में भाग मिलेगा; देशी कारीगरी की उन्नति के लिये कोशिश की जावेगी; स्वतन्त्र देशों की भांति भारतवर्ष में भी वक्तृता देने की पूर्ण स्वतन्त्रता, सरकारी कार्यों की आलोचना करने का पूर्ण अधिकार मिल जावेगा; ग़रीब किसानों की दशा सुधारने का प्रयत्न किया जावेगा ।

भारतवासियों की कुछ भी आशायें हों अधिकारी वर्ग उनकी चिन्ता क्यों करें। उदार हृदया महारानी विक्टोरिया की घोषणा को सामने रखते हुये भी लार्ड लिटन ने राज-भक्त भारतवासियों से हथियार छीन लिये; भारतवर्ष में रह और भारतवर्ष का शासक बन भारतीय कारीगरी की परवाह न कर लंकाशायर (इङ्गलेंड) के निवासियों को फ़ायदा पहुंचाने के उद्देश से सन् १८८२ में भारतवर्ष में आने वाले विलायती माल पर चुंगी उठा दी। भारतवर्ष में मजिस्ट्रेट कलेक्टर और कमिश्नर बनने के लिये परीक्षा इङ्गलेंड में रक्खी गयी। और सन् १८७८ में इस परीक्षा में बैठने वाले विद्यार्थियों की उमर की कैद कम करके १६

वर्ष करदी गई। जिसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय विद्यार्थियों को १६ वर्ष की उमर में सात समुद्र पार विलायत में परीक्षा देने के लिये जाना कठिन हो गया। भारत वर्ष में फौज का साधारण ख़र्च सन् १८७१ से सन् १८७६ तक का एक साल का औसत ख़र्च १४॥ करोड़ रुपये था, यही बढ़ कर सन् १८८० में २१ करोड़ होगया। फौजों में भारत वासियों के लिये कमीशन्ड रैंक (ऊंचे ओहदे) बंद रहे। सन् १८८३ में इलवर्ट बिल का, कि जिसके द्वारा गोरे और काले न्यायाधीशों में भेद मिटाने का प्रयत्न किया गया था ऐंग्लो इन्डियनों ने बड़ा विरोध किया। इस प्रकार "भारत-वासियों में असंतोष के कारण भारतवासियों की आवश्यकतायें दिन पर दिन बढ़ती गईं। देश में शिक्षा द्वारा भारतवासियों की आशायें बढती जाती थीं, विचार उदार और स्वाधीन होते जाते थे-परन्तु राजनैतिक स्वत्व बढ़ने के कोई चिन्ह नहीं देख पड़ते थे—ऐसे कितने ही कारणों ने शिक्षित भारतवा-सियों को नये विचार और नये संगठन की ओर प्रेरित किया*।" इंगलेंड में जान ब्राइट, हेनरी फ़ासेट, चार्लस ब्रेडला और भारतवर्ष में मिस्टर ह्यूम इत्यादि उदार महानु-भाव दीन भारतवासियों के पक्ष समर्थनमें अपना समय और धन लगाया करते थे। परन्तु अब यह निश्चय हुवा कि "देश में राजनैतिक उन्नति, बिना एक राष्ट्रीय महा सभा के स्थापन किये हुवे होना असंभव है।"*

२८ दिसम्बर सन् १८८५ को मिस्टर ह्यूम, सरफीरोज़-

* "इंडियन नेशनल इवोल्यूशन" माननीय बाबू अम्बिकाचरण मजूमदार।

शाह मेहता, बाबू उमेशचन्द्र बनर्जी, बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, दादाभाई नौरोजी, दिनशा एडल जी वाचा, रहमत उल्ला सायनी, सुब्रह्मण्य अय्यर, आनन्द चार्लू, कृष्णा जी लक्ष्मण नुलेकर, सीताराम हरी चिपलूनकर, महादेव गोविन्द रानाडे, बाबू गंगा प्रसाद वर्मा, पंडित अयोध्यानाथ, लाला बैजनाथ, लाला मुरलीधर आदि ने बंबई में सेठ गोकुल दास तेजपाल के संस्कृत विद्यालय में पहली राष्ट्रीय कांग्रेस की। पहली कांग्रेस में सर्वसम्मत से बाबू उमेशचन्द्र बनर्जी सभापति बनाये गये।

तब से प्रति वर्ष यह राष्ट्रीय महासभा भारतवर्ष के प्रधान शहरों में होती आती है। बृटिश सरकार पर इस राष्ट्रीय महासभा के प्रस्तावों और परामर्शों का बहुत असर पड़ता आया है। यद्यपि आरम्भ में अधिकारी वर्ग ने इसका ओर से विरोध किया और इसके सालने जलसे के होने में अनेक प्रकार की कठिनाइयां उपस्थित की परन्तु प्रकृतिके विरुद्ध उनका यह प्रयत्न कैसे सफल हो सकता था? स्वतंत्रता और बराबरी की इच्छा प्रत्येक मनुष्य में स्वाभाविक है। राष्ट्रीयता का जोश जो फैल गया उसे फिर संसार में कौनसी शक्ति रोक सकती है? 'ऊंच और नीच' से घृणा और अन्याय का विरोध मानवी प्रकृति का लक्षण है; यदि भारत-वासियों से टिक्कस (कर) वसूल किया जाता था और उसे खर्च करने में उनकी सलाह भी न ली जाती थी तो इस अन्याय को वे कैसे सह सकते थे, यदि अपने ही देश के प्रबन्ध में ओहदे पाने के लिये भारतवासियों के वास्ते कठिनाइयां उपस्थित की जातीं थीं तो उसे वे कैसे चुप चाप बैठे सह

सकते थे? हज़ार कोशिश करने पर भी कांग्रेस चल ही निकली, इतना ही नहीं अधिकारी वर्ग को उसके आगे सिर झुकाना पड़ा, उसकी सलाहें माननी पड़ीं, और उससे विरोध की दृष्टि हटाकर उसके साथ सहानुभूति करनी पड़ी। कांग्रेस ने देश की बहुत बड़ी सेवा की है। प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य है कि वह कांग्रेस की सब प्रकार के सहायता करे।

श्रीमान् मालवीय जी पहली कांग्रेस में कई कारणों से सम्मिलित न हो सके थे। परन्तु सन् १८८६ में कलकत्ता में होने वाली दूसरी कांग्रेस में आप सरकारी नौकर होने पर भी सम्मिलित हुवे। श्रीयुत दादा भाई नौरोजी इस कांग्रेस के सभापति थे। श्रीमान् मालवीय जी अपने गुरू पंडित आदित्यराम जी भट्टाचार्य के समीप कांग्रेस मंडप में बैठे हुये थे। मंच पर एकके बाद एक बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और स्वर्गीय राजा रामपाल सिंह ऐसे महानुभावों की ओजस्विनी वक्तृतायें हो रही थीं। श्रीमान मालवीय जी की भी इच्छा कांग्रेस प्लेटफार्म पर बोलने की हुई; मालवीय जी ने अपने गुरू पंडित आदित्य रामजी से आज्ञा मांगी, पंडित जी ने बड़े उत्साह के साथ श्रीमान् मालवीय जी को आज्ञा दे दी। देश-सेवा की उत्कट इच्छा और देश प्रेम का जोश मालवीय जी में बचपन से ही था आज मातृ भूमि की एक मात्र प्रतिनिधि महासभा में अपने विचारों को प्रगट करने का अवसर पा मालवीय जी का हृदय गद्गद हो उठा। सभापति की आज्ञा ले मालवीयजी तुरन्त प्लेटफार्म पर जा खड़े हुए। मालवीय जी की इस पहली ही वक्तृता का जनता पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा और उस दिन से कांग्रेस के कार्यकर्ताओं में मालवीय जी का बड़ा मान

होने लगा। कलकत्ता कांग्रेस के सेक्रेटरी मिस्टर ह्यूम ने कांग्रेस रिपोर्ट में लिखा है कि "जिस वक्तृता के लिये कांग्रेस मंडप में कई बार करतल ध्वनि हुई थी, और जिस वक्तृता को जनता ने बड़े उत्साह से सुना था वह पंडित मदनमोहन मालवीय की वक्तृता थी। पंडित जी के गोरे रंग, सुन्दर मूर्ति, और हृदय ग्राहणी न्याययुक्त मधुर भाषण ने कांग्रेस में बैठे हुये प्रत्येक पुरुष के चित्त को अपनी ओर आकर्षित कर लिया था।"

श्रीमान् मालवोय जी ने इस कांग्रेस में 'व्यवस्थापक सभा का सुधार' के प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुये कहा था कि :—

"बृटिश सरकार को हमें इस सुधार की आवश्यकता और उपयोगिता समझाने की आवश्यकता नहीं है। हां यदि भारतवर्ष पर किसी ऐसे राजा का राज्य होता कि जो प्रजा के सुख दुख की परवाह न कर मनमानी किया करता, या जो प्रजा के राजनैतिक स्वत्वों अथवा अपनी जिम्मेदारियों को न समझता होता, तब हमारे लिये निश्चय ही यह आवश्यक था कि हम आज इस प्रस्ताव के समर्थन में अनेक युक्तियां और प्रमाण देते ; ऐसे प्रस्ताव के लिये बृटिश सरकार या ब्रिटिश जाति के सन्मुख कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं है। बृटिश जाति ने अपनी सन्तान के हित पूर्वकाल में ऐसे ही राजनैतिक स्वत्व प्राप्त करने के लिये अपना खून बहाया है। हम भी आज उन्ही के उदाहरण से पाठ सीख उनसे वही स्वत्व अपने लिये मांगते है कि जिसे उन्होंने मानवी समाज के लिये सदैव आवश्यक समझा और जिसकी मर्यादा रखने

के लिये वे सदैव अपने प्राण तक न्यौछावर करने के लिये तैय्यार हैं।

"प्रतिनिधि संस्थाओं से अंगरेज उदासीन कैसे? वे अंगरेज नहीं, नीच बने हुये मनुष्य हैं। मुझे यह देख कर बड़ा ताज्जुब होता है कि यह गोरे शासक, हमारे लिये प्रतिनिधि संस्थाओं से इन्कार करते हुये, और हम पर निष्ठुर शासन करते हुये कैसे अपने को अंगरेज कहा करते हैं। प्रतिनिधि सत्ता अंगरेज को वैसे ही प्रिय होती है, जैसे कि अंगरेजी भाषा और अंगरेजी साहित्य। क्या यहां मुझसे यह कहने का कोई साहस कर सकता है कि इङ्गलेड हमें अंगरेजी भाषा और अंगरेजी साहित्य देकर अब प्रतिनिधि सत्तात्मक राज्य देने से इन्कार करेगा?

"अङ्गरेजों का यह पवित्र सिद्धान्त रहा है कि जिससे कर लिया जावे उसे प्रतिनिधि भेजने का भी स्वत्व दिया जावे। अंगरेज अपनी आत्मा का हननकर कैसे बिना यह स्वत्व दिये हम पर कर लगावेंगे? हम भी उन्हीं के समान स्वतंत्र और शिक्षित बृटिश प्रजा हैं। कांग्रेस भारतवर्ष की प्रतिनिधि सभा है इसके द्वारा हम इंगलेंड से प्रार्थना करते हैं कि वह हमें भी अब स्वतंत्र बृटिश नागरिक के स्वत्व प्रदान करे।"

इस वर्ष के बाद से श्रीमान् मालवीयजी बराबर कांग्रेस में सम्मिलित होते रहे हैं। प्रति वर्ष कांग्रेस द्वारा श्रीमान् मालवीयजी ने महत्व पूर्ण विषयों और देश की आवश्यकताओं पर ओजस्विनी और प्रभाव पूर्ण वक्तृतायें देकर देश में लोकमत दृढ़ किया और सरकार पर जोर डाला है। वर्तमान युग का यह लक्षण है कि देश में चाहे विदेशी राज्य हो अथवा स्वदेशी

राज्य, राज्य प्रणाली और राज्य नियम में अदल बदल होने के लिये ज़ोरदार लोकमत की जरूरत समझी जाती है। इंगलेंड ऐसे स्वाधीन और प्रजातंत्र राज्य में सन् १८४०-४५ के बीच में देश में आने वाले अनाज पर भारी कर लगने के कारण इङ्गलैंड में अन्न महंगा था इस मंहगई के कारण साधारण जनता को बहुत कष्ट था। जान ब्राइट और कोबडन इत्यादि महानुभावों ने इस कर को कमकर देने के लिये देश में भारी आन्दोलन किया। गांव गांव और शहर २ में हज़ारों सभायें की गईं और लाखों मनुष्यों के हस्ताक्षर कराकर सैकड़ों प्रार्थना पत्र बृटिश पारलियामेंट और प्रधान मंत्री के पास भेजे गये। तब कहीं वह समय आसका कि सन् १८४५ में तत्कालीन प्रधान मंत्री सर राबर्ट पील ने पारलियामेंट से यह कानून बनवाया जिससे इङ्गलैंड में आने वाले अनाज पर कर घटाया गया। बृटिश राजनीतज्ञ कि जिनके हाथ में बृटिश साम्राज्य और विशेष कर इङ्गलैंड और भारतवर्ष का शासन भार है यह सिद्धांत मानते हैं कि जिस सुधार को अधिकांश प्रजा चाहती है वही रखना चाहिये। इसलिये प्रजा के लिये यह आवश्यक है कि यदि उसे किसी प्रकार के सुधार की जरूरत है तो उसके लिये प्रजा को घोर आन्दोलन कर यह दिखला देना चाहिये कि अधिकांश प्रजा उस सुधार को चाहती है देश में बालक युवा जरठ नर नारी सब को नये सुधार की आवश्यकता और उपयोगिता समझाना चाहिये। गांव गांव और शहर शहर सभायें कराके लाखों और करोड़ों मनुष्यों के हस्ताक्षर वाले सैकड़ों प्रार्थना पत्र बृटिश पारलियामेंट और प्रधान मंत्री के पास भेजना

चाहिये। कांग्रेस यही काम करती आई है। और उसके आन्दोलनों से भारतवासियों को कई उच्च सुधार मिल सके हैं और मिलेंगे।

सन् १८९१ में नागपुर में होने वाली कांग्रेस में श्रीमान् मालवीय जी ने 'भारतवासियों की तकलीफ़ें और उनको दूर करने के उपाय' विषयक प्रस्ताव उपस्थित करते हुये कहा था कि 'बहुधा लोग यह कहा करते हैं कि हम लोग कांग्रेस में वही पुरानी बातें प्रति वर्ष दोहराया करते हैं। परन्तु सज्जनो! इस शोचनीय दशा के लिये दोष किसका है? क्या कही हुई बातों को दोहराने के लिये हम दोषी हैं या कि सरकार कि जो हमारी इतनी प्रमाण पूर्ण प्रार्थना की ओर कई बार दोहराने पर भी कान नहीं देती। कितने ही सरकारी नौकर कह चुके हैं कि इस देश में निर्धनता निस्सन्देह बहुत ज्यादा हैं और वह दिन पर दिन बढ़ती जाती है। सर विलियम हंटर, सर चार्लस् इलियट, सर आकलैंड कालविन और कितने ही अन्य महानुभाव वाइसराय की कौंसिल के मेंबर की हैसियत से कई बार इस बात को दुख सहित प्रगट करके चुके हैं कि भारतवर्ष गरीब है और दिन पर दिन अधिक गरीब होता जाता है। परन्तु हो क्या रहा है? क्या सरकार ने देश में कोई ऐसे सुधार किये या कि क्या कोई ऐसे राज्य नियम बनाये कि जिनसे भारतवासियों की दशा सुधरे, निर्धनता दूर हो और देश समृद्धशाली बन सके? नहीं हमें पछताना पड़ता है, और मुझे कहते हुये दुख होता है कि सरकार के लिये बड़ी शरमकी बात है कि अभी तक इस विषय में तनिक क्या लेश मात्र भी कुछ नहीं किया गया।

दस पन्द्रह वर्ष हुये जब सर विलियम हंटर ने कहा था कि ४ करोड़ भारतवासी अथवा भारतवर्ष की जनसंख्या का लगभग $\frac{1}{5}$ भाग जीवन भर में कभी भी भर पेट भोजन नहीं कर पाते हैं। सर चार्ल्स इलियट ने जब वे आसाम के कमिश्नर थे यह कहा था कि "मुझे यह कहते हुवे कोई संकोच नहीं है कि हमारे किसानों में से आधे किसान ऐसे हैं कि जिन्हें ३६५ दिन में से एक दिन भी पेट भर भोजन करने का सुख नहीं प्राप्त होता।" वाइसराय की कौंसिल (परिषद्) के अर्थ सचिव सर एडवर्ड बेयरिङ्ग ने कहा था कि "प्रत्येक भारतवासी की औसत आमदनी २७ रुपये प्रति वर्ष है।" परन्तु श्रीयुत दादाभाई नौरोजी ने यह सिद्ध किया है कि प्रत्येक भारतवासी की औसत आमदनी २१ रुपये प्रति वर्ष से भी कुछ कम है। मिस्टर डिगवी भी इसी मतके पक्षपाती हैं। परन्तु इन बातों को सुनकर कि जिन्हें सब मानते हैं और जिन्हें कोई असत्य नहीं सिद्ध कर सका है। सरकार ने देश की दरिद्रता मिटाने के लिये क्या सुधार किया? दिखलाने के लिये भले ही सरकार ने इधर उधर कोई काम ऐसे किये हों कि जिनसे यह जान पड़े कि सरकार की इच्छा देश की दरिद्रता दूर करने की है। कभी कभी सरकार देश में सैर करने और रिपोर्टें लिखनें के लिये कमीशन भी मुकर्रर कर दिया करती है। परन्तु इन कमीशनों की बतलाई हुई तदवीरों के अनुसार कौनसा सुधार किया जाता है? इनकी लम्बी रिपोर्टें कौन से काम आती हैं? फौज के संबन्ध में जांच करने के लिये (शिमला आरमीज) कमीशन बैठा, सरकारी नौकरियों में भारतवासियों की दशा जांच करने वाला

(पबलिक सरविसेज़) कमीशन बैठा, सरकारी आय और व्यय की जांच करने वाली (फिनान्स) कमेटी बैठी। कहिये उनके श्रम का फल क्या हुवा ? हां योग्यता के साथ अच्छी लिखी हुई और उत्तम छपी और जिल्द बंधी हुई रिपोर्टें अवश्य हमें मिल गईं। इससे अधिक और कुछ नहीं हुवा। इसलिये यह हमारा दोष नहीं है। हमें प्रति वर्ष वही पुराना राग अलापने में कोई सुख नहीं होता। परन्तु जब देश की शोचनीय दशा हृदय में वेदना उत्पन्न कर देती है तब कहे बिना रहा नहीं जाता। हमारे कहे शब्द बारबार हमारे मुंह से इसलिये नहीं निकलते हैं कि हमें वे अच्छे लगते हैं बस बारबार हम उन्हीं बातों को इसलिये दोहरा रहे हैं कि हमें आशा है, कि शायद अब की बार कहने से सरकार का हृदय पिघल जाये, शायद अब की ही बार उसे भारत की दरिद्र दशापर कुछ दया आ जावे, और शायद अब वह व्यय कम करके भारतवासियों को आपत्तियों और कष्टों से बचाने की सत्य चेष्टा करे।

हम जानते हैं कि इस गरीबी के कई कारण हैं। यहां पर हम इन छोटी २ वक्तृताओं में उन सब कारणों की व्योरे वार व्याख्या नहीं कर सकते। इस प्रस्ताव में हम केवल उन्हीं कारणों का दिग्दर्शन करावेंगे कि जिनके लिये सरकार उत्तरदाता है। और हम यहां केवल उन्हीं युक्तियों और सुधारों की व्याख्या करेंगे कि जिन्हें सरकार यदि चाहे तो उपयोग कर सकती है यही नहीं, हम यहां उन्हीं युक्तियों और सुधारों का वर्णन करेंगे कि जिन्हें यदि सरकार अपने को सभ्य सरकार कहती है तो उपयोग करना चाहिये। वे कर्त्तव्य और युक्तियां

क्या है ? पहले तीन क्लासों (खंडों) में आप ने बतलाया है कि देश के शासन कार्य में भारतवासियों को उचित भाग नहीं मिलता है। मेरे पूर्व वक्ता ने उस विषय पर काफ़ी कहा है इसलिये उस विषय को मैं अब यहां न लूंगा। मेरे बाद जो बोलने के लिये यहां पर आवेंगे वे सरकारी आयके विषय में कहेंगे। मेरे मित्र श्रीयुत वाचा ने फौजी खर्च के विषय में काफी कहा है। इस विषय की याद मेरे दिल में चुभती है। आपको याद है कि महारानी विक्टोरिया ने अपनी प्रसिद्ध घोषणा में यह कहा था कि भारतवासी उन्हें उतने ही प्यारे हैं जैसे कि उनके स्वजातीय इङ्गलैंड और आयरलैंड वासी। महारानी ने आपनी घोषणा में यह भी कहा था कि कोई भी भारतवासी रंग रूप, जाति या धर्म भेद के कारण किसी प्रकार के सरकारी पद पाने से वंचित न रखा जावेगा। इतने पर भी हमें आज क्या देख पड़ रहा है ? फौज की नौकरी का जरा ध्यान कीजिये। हमारे देशवासी सरकार के लिये राज भक्ति, वीरता, और उत्साह के साथ लड़ते रहे हैं और लड़ते रहेंगे। देश के बाहर भी जहां कहीं महारानी ने आज्ञा दी वे सहर्ष गये और बृटिश सरकार के लिये अपना खून पानी कर बहाया। इस कारगुजारी के लिये उन्हें क्या मिला ?। सूबेदारी और रिसालदारी की छोटी मातहत जगहों पर वे रखे जाते हैं, ऊंचे ओहदे उन्हें दिये नहीं जाते हैं। पच्चीस २ वर्ष की बहादुराना नौकरी के बाद भी उन्हें कल के भरती किये हुवे गोरे छोटे लफटन्टों की मातहती में रहना पड़ता है। क्या महारानी विक्टोरिया की घोषणा का पूरा करना यही है ? भारतीय सिपाहियों को

फौज में कप्तान, कमांडर. लफटेंट न बनाने में कौन सा न्याय है? क्या वे लड़ाइयों में महारानी के सिंहासन को अचल बनाने के लिये अपना खून नहीं बहाते रहे हैं? क्या हमारे विरोधी एक भी कोई ऐसा उदाहरण दे सकते हैं कि जिसमें हमारे भारतीय सिपाहियों ने महारानी की आज्ञा मानने में जरा भी कोताही की हो? मुसलमान सिपाहियों को अफ़ग़ानों से लड़ने भेज दो और वे महारानी के लिये अपने भाइयों को भूल जावेंगे, अपने सहधर्मी को भूल जावेंगे और बहादुरी से उनसे लड़ेंगे। हिन्दू सिपाहियों को देश के बाहर जाने की आज्ञा दो कभी नाहीं नहीं करेंगे। वे सुख से महारानी की आज्ञा मान जहां की आज्ञा होगी वहां जाकर बहादुरी से लड़ेंगे। फिर क्यों हमारे इन भारती सिपाहियों को फौज के ऊंचे ओहदे नहीं दिये जाते हैं? इसका फल क्या होता है? यही कि पेनशन और तनखाहों में हमारे देश का अमूलधन प्रतिवर्ष बाहर जा रहा है। जो फौजी विभाग में हमारी दशा है वही दशा मुल्की विभाग में है। कहाँ महारानी की वह पवित्र घोषणा और कहाँ उनके नौकरों और प्रतिनिधियों का यह काम। क्या घोषणा के अनुसार काम होना इसी को कहते हैं? यह बहाना बना कर कि कलकृरी (सिवल सरविस) का इमतिहान विलायत ही में होगा तुम भारत वासियों को देश में कलेकृर और कमिश्नर बनने और देश के शासन में ऊंचे ओहदे पाने से रोकते हो। तुम उन जगहों पर भी भारत वासियों को नहीं रहने देते हो कि जिन्हें भारत सचिव ने भारत वासियों ही के लिये अलग नियत किया है। मेरा अर्थ (अनकोवेनेन्टेड सरविस) कलेकृर से नीचे की

नौकरियों से हैं । तुम्हीं मजिस्ट्रेट और कलक्टरों (कोवेनेन्टेड सरविस) को नौकर करने वाले हो । जहां "१०० की जरूरत होती है वहाँ तुम १५० नौकर कर लेते हो । इसका फल यह होता है कि देश पर ऐसे आदमियों की तनखाह का भार पड़ जाता है कि जिन की नौकरी की देश को जरूरत नहीं है । दूसरा फल यह होता है कि उन नौकरियों पर कि जो भारत वासियों के लिये अलग की गईं थीं वही नियत कर दिये जाया करते हैं । उदाहरण के लिये चाहे जिस विभाग को ले लीजिये-जंगल विभाग, रेल विभाग, इञ्जीनियरी विभाग (पी० डब्लू डी) किसी में भी यह चेष्टा नहीं की जाती कि भारत वासी नौकर किये जांय, न कोई इस बात की ही ओर ध्यान देता है कि योग्य मनुष्य चाहे वह काला हो या गोरा नौकर रखा जावे, वरन् प्रयत्न यह किया जाता है कि—मुझे कहते हुवे दुःख है—भारतवर्ष में अङ्गरेजों के लिये नई जगहें नकाली जावें, कि जिसमें वे स्वदेश से भी अधिक ऊंची २ तिनख्वाहें यहां उड़ावें और बचत व पेनशनें इङ्गलैंड ले जावें कोई यह ख्याल न करे कि इन बातों के कहने में मेरे हृदयमें किसी प्रकार के भी अङ्गरेजों की ओर से अमित्रता के भाव हैं । मेरे हृदय में अङ्गरेजों के लिये वैसा ही प्रेम व आदर और वैसी ही सहानुभूति है जैसी भारतवासियों के लिये । जो कुछ मैं कहता हूं वह यही है कि यह घोर अन्याय है, महापाप है, और अति निन्दास्पद है कि जब तुम्हारे घर में तो तुम्हारे भाई भूख की महा कठिन व्यथाओं से पीड़ित हों, तुम दूर से विदेशियों को बुला उनके सुख भोग की सामग्री इकट्ठा करो । तुम कहते हो कि देश गरीब है । देश गरीब न हो तो

हो क्या ? मारक्किस आफ़ सेलिसबेरी ने स्वयं एकबार यह कहा था कि भारतवर्ष की अधिकांश आय, पलटे में बिना कुछ लिये योंही विदेश को भेज दी जाती है। अन्य कई सज्जनों ने कहा है कि भारतवर्ष की बची हुई आय अङ्गरेजों की बचत और पेनशनों के रूप में विलायत पहुंच जाती है। सिविल सरविस (मजिस्ट्रेट, कलेक्टर, कमिश्नर छोटे लाट इत्यादि) का सालाना खर्च १४ करोड़ रूपये हैं। इस रकम में से लगभग $\frac{२}{३}$ अङ्गरेजों के हाथ में पहुंच जाती है और केवल $\frac{१}{३}$ भारत वासियों के हाथ लगती है। फौज में जितनी अच्छी२ नौकरियां हैं, जो ऊंची तनख्वाहों के ओहदे हैं वे सब अङ्गरेजों को सौंपे जाते हैं। क्यों ऐसा किया जाता है? इस लिये नहीं कि अङ्गरेज भारत वासियों की अपेक्षा अधिक बलवान अथवा योग्य होते हैं, इसलिये भी नहीं कि वे भारत वासियों की अपेक्षा अधिक बहादुर होते है, वरन् इस लिये कि भारत वासियों की अपेक्षा उनका रंग अधिक गोरा होता है। फौजी और मुल्की नौकरियों में मिला कर लगभग १५ करोड़ रुपया तनख्वाह पेन्शन विलायती खर्च (होमचार्जेज) इत्यादि में प्रतिवर्ष भारतवर्ष से विलायत जाता है और इस रकम के बदले में भारतवर्ष में आता कुछ भी नहीं। इस का फल कई लोगों ने बड़ी योग्यता के साथ दिखलाया है। सन् १८८४ के "फ़ार्ट नाइटली रिव्यु" में मिस्टर जे० विलसन ने इस विषय में लिखा था कि "किसी न किसी भांति से हम उस दरिद्र देश से ३० करोड़ रुपया प्रतिवर्ष ले लिया करते हैं। उस देश में प्रत्येक मनुष्य की औसत आमदनी ५० रुपया

सालाना है" "इस प्रकार भारतवर्ष से हमें जो खिराज की रकम मिलती है वह लगभग ३ करोड़ (ठीक १० करोड़) कुटुम्बियों की साल भर की है। अर्थात् भारतवर्ष की पूरी कमाई का $\frac{१}{१०}$ (असल में $\frac{१}{३}$) भाग हम प्रतिवर्ष ले लेते हैं।" मैं अब अधिक समय न लूंगा। जो कुछ मुझे कहना था मैं कह चुका, मेरे बाद आपके सन्मुख जो सज्जन इस डायस पर खड़े होंगे वे इस विषय पर अधिक कहकर और भी अच्छी तरह समझा देंगे कि सरकार हमारे देशवासियों को सरकारी उच्च पदों से वंचित रख कर अन्याय ही नहीं कर रही है वरन भविष्य के लिए महानाशकारी नीति का अवलम्बन कर रही है। बिना प्रजा के किसी राज्य का अस्थित्व भी सम्भव नहीं। प्रजा में दरिद्रता बढ़ने दीजिये राज्य का नाम ही मिट जावेगा, कमसे कम उस राज्य को फिर राज्य तो कोई नहीं कह सकता है।*

सन् १६०६ में भारतवासियों ने श्रीमान् मालवीय जी को इन्डियन नेशनल कांग्रेस के सभापति बनाकर सर्वोच्च मान दिया। अमेरिका के समान यदि भारतवर्ष में प्रजा सत्तात्मक राज्य होता तो हम भारतवासी अपने योग्य नेताओं को इसप्रजा सत्तात्मक राज्य का सभापति बना कर सन्मानित करते। अथवा इङ्गलेन्ड के समान यदि पारलियामेन्टरी शासन भी भारतवर्ष में होता तो निश्चयही भारतवासी अपने योग्य

---

* श्रीयुत् चुन्नीलाल लल्लू भाई परेख बम्बई द्वारा सम्पादित और सन् १८६२ में प्रकाशित "Emiment Indians on Indian Politics" से धन्यवाद सहित अनुवादित। लेखक

आत्मत्यागी नेताओं को प्रधान मन्त्री बनाकर सन्मानित करते। परन्तु भारतवर्ष में संसार से निराली ही एक नई शासन प्रणाली इस समय विद्यमान है। इस शासन प्रणाली के अनुसार देशमें उत्पन्न होने वाले देशके जल वायु में चलने वाले भारत वासी ही को अपने ही देशमें विदेशी गोरे अङ्गरेजों के लिए राज्य-पद खाली रखने पड़ते हैं। ऐसी दशा में योग्य से योग्य भारत वासी को छोटे वा बड़े लाट की कौंसिलों में बैठ कर एङ्गलो इन्डियन पत्रों और सरकारी मन्त्रियों के कटाक्षों से निरुत्साहित किये जाने पर भी निष्फल होने वाली योग्यतापूर्ण वक्तृतायें देने के सिवाय जीवन में और कुछ नहीं कर मिलता है। मालवीय गांधी, गोखले और दादा भाई ऐसे योग्य राजनीतिज्ञों के लिए कि जिनका किसी भी पाश्चात्य सभ्य देश को गर्व होता भारतवर्ष के शासन में कोई स्थान नहीं निकल सका। इने गिने वाइस-रायों को छोड़ कर कदाचित ही कोई अङ्गरेज भारत सरकार की ओर से भारतवर्ष में ऐसा आया होगा कि जो राजनैतिक सूझ, चतुरता, और कार्य क्षमता में हमारे इन नेताओं की टक्कर का कहा जासके; परन्तु वाइसरायलटी और छोटी लाटगिरी कौन कहे मुहर्रम और दशहरे ऐसे झगड़े के समय में नगर का प्रबन्ध भी नवसिखिये अङ्गरेज युवकों के आगे हमारे नेताओं को सौंपा जाना उचित नहीं समझा जाता। बलिहारी है इस पाश्चात्य शासन प्रणाली की। भारतवर्ष में तो ऐसी शासन प्रणाली अङ्गरेजों से पहले कभी नहीं रही, मुसलमानी शासन काल में तो हिन्दू बड़े २ सूबों के सूबेदार और बड़ी फौजों के फौजदार इत्यादि बन कर राज्य में ऊंचा ऊंचा ओहदा पाया करते थे।

कांग्रेस हमारे देश में सब से बड़ी संस्था है। देश के प्रत्येक जिले के प्रतिनिधि आकर इस सभा में सामयिक राजनैतिक समस्यायों पर विचार करते हैं। इस सभा में निर्धारित किया हुआ मत देश भर का मत समझा जाता है। यही राष्ट्रीय कांग्रेस अमेरिका के समान हमारी महा प्रतिनिधि सभा और इङ्गलैंड के समान हमारी पारलियामेंट है। हम अपने नेताओं को इसी राष्ट्रीय महासभा कांग्रेस का सभापति बनाकर इङ्गलेन्ड के प्रधान मन्त्री और अमेरिका के प्रेसिडेंट से भी मानसम्मान में कहीं अधिकते हैं।

१९०९ में लाहौर में होने वाली कांग्रेस के लिये श्रीमान मालवीयजी सर्व सम्मति से सभापति निर्वाचित किये गये। सभापति की हैसियत से जो वक्तृता मालवीय जी ने दी उसे सुन कर काँग्रेस में उपस्थित प्रतिनिधि दंग रह गये। कांग्रेस में सब सभापति महीनों पहले से अपनी वक्तृताएं तैयार कर छपवा ले आते हैं और कांग्रेस के प्लेटफार्म पर खड़े होकर पढ़ दिया करते हैं। श्रीमान मालवीय जी को ईश्वर ने एक विलक्षण शक्ति वक्तृता देने की दी है। आपने कोई वक्तृता लिख कर नहीं तैयार की थी, वरन बोलने के लिए खड़े होकर वहीं पर सब सामयिक प्रश्नों की उचित समालोचना करते हुए और सन १९०९ के मन्टोमारले सुधार में नुक्स दिखलाते हुए जबानी लगभग तीन घन्टे तक वक्तृता दी। इस वक्तृता को सुनकर लगभग सब ही भारतीय राज्यनीतिज्ञों ने युक्तता, स्पष्टता और निर्भीकता के लिए इस वक्तृता की मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

इस वक्तृता में सन् १९०६ के सुधार के नुक्स दिखलाने के वाद मालवीय जी ने मुसलमान समाज से यह अपील की कि "मुसलमान भाइयो हमें दुख है कि तुमने अपने कृत्य से उस उन्नति को कि जिसके लिए हम सब निरन्तर प्रयत्न करते आये हैं आज पीछे ढकेल दिया। अब भी हम यदि पिछली बातों को भूल जावें तो कोई हानि अभी नहीं हुई है। मुझे विश्वास है कि तुममें भी कुछ न कुछ अवश्य ऐसे महानुभाव हैं कि जो यह समझते हैं कि गलती की जा रही है। यदि एक जाति दूसरी जाति की अपेक्षा किसी प्रकार के सामयिक अधिकार अधिक पा जावे तो राष्ट्रीय उन्नति के सामने उस लाभ की कोई बराबरी नहीं की जा सकती। उस पवित्र स्वदेश प्रेम को त्यागने में कैसा शोचनीय पतन हुआ? हिन्दू मुसलमान और इसाई—हम सब भाई हैं। राष्ट्रीय गति को भूल कर यदि हम किसी जाति विशेष के लाभ की चिन्ता में लग जावेंगे तो हमारी दशा कैसी शोचनीय हो जावेगी?"*

सन १९१७ में लखनऊ की कांग्रेस में श्रीमान मालवीय जी ने संयुक्त प्रांत की ओर से सभापति बाबू अम्बिकाचरण मजूमदार को धन्यवाद देते हुए देशकी वर्तमान दशा के विषय में कहा था कि "अब ३० वर्षों के (कांग्रेस) के अनुभव के बाद वह समय आया है जब यह विश्वास हमारे हृदय पर अच्छी तरह अङ्कित हो गया है कि जिन लोगों के हाथों में हिन्दुस्तान के शासन की बागडोर है, उन्होंने—इन्डियन सिविल सर्विस

---

* राजनैतिक पुस्तकों के प्रसिद्ध प्रकाशक मि० नटेशन की "Congress Conferenses and conventions of '1909" से धन्यवाद सहित अनुवादित—लेखक।

के अधिकारियों और बृटिश पार्लियामेंट के भी सदस्य गणों ने बुद्धिमता और न्याय की पुकार नहीं सुनीं। मुझे प्रसन्नता होती यदि मैं कृतज्ञता के साथ कह सकता कि उन्होंने महान बृटिश जाति में पुरुषों के योग्य आचरण दिखा कर हमारी मांग का आदर किया। कुछ छोटी बातों के सम्बन्ध में उन्होंने हमारी मांग की सुनवाई की है और उसके लिए हम कृतज्ञ भी हैं। परन्तु समस्त महत्व पूर्ण विषयों में या तो बिलकुल सुनवाई ही नहीं हुई या खेदजनक बिलम्ब किया गया है। इसका फल यह हुआ कि हमारा विश्वास हो गया है कि देश के शासन कार्य में जब तक हमारा दृढ़ और निश्चयात्मक भाग नहीं होगा तब तक उस उन्नति की सम्भावना नहीं है जिसको प्राप्त करना प्रत्येक सभ्य जनता का जन्म स्वत्व है। हमारे लेखे में साधारण न्याय कराने के कई प्रस्तावों की कई आवृत्तियां पड़ी हैं, जैसे न्याय और शासन विभागों का अलगाव। उसमें प्रतिवर्ष दोहराई जाने वाली यह पुकार भी है कि हमें कुछ शिक्षा दी जाय। हमारे लेखे में यह बात दर्ज है कि यद्यपि हम लोगों ने प्रार्थना की कि प्रारम्भिक शिक्षा मुफ़्त और अनिवार्य कर दी जाय परन्तु उसके लिए जो व्यवस्था हुई वह अत्यन्त हताश करने वाली और असन्तोष जनक है। कौंसिल के परिवर्द्धित होने पर भी जब हमारे प्यारे भाई गोपाल कृष्ण गोखले ने एक बिल पेश कर अनिवार्य शिक्षा आरम्भ कराने का प्रयत्न किया तो सरकारी सदस्यों के अधिक संख्यक दलने, जिसका काम कौंसिल में लोक प्रतिनिधियों के प्रस्तावों का विरोध करने के सिवा और कुछ नहीं है, उसे निष्फल कर दिया। हमारा पूर्वोक्त विश्वास दृढ़ करने

के लिये और क्या घटनायें हुईं ? सब जानते हैं कि रूस में कुछ वर्ष पहिले स्वराज्य का नाम निशान तक न था, लेकिन जापान से पराजित हो जाने पर उसकी आंखें खुलीं और उसने जाना कि आधुनिक सभ्यता के लिये किन सामानों की आवश्यकता है। पहिली ड्यूमा (राष्ट्रीय सभा) ने जो मैं समझता हूं कि १९०३ में बैठी, यह समझ कर कि राष्ट्रीय उन्नति के लिये सार्वजनिक शिक्षा परमावश्यक है निश्चय किया कि शिक्षा अनिवार्य्य हो जानी चाहिये। उसने १९ वर्ष का कार्यक्रम तैयार किया और इस मियाद के भीतर ही कुल रूस साम्राज्य में सर्व्वव्यापी शिक्षा जारी कर देने का मन्सूबा बांधा १९१६ में उसके कार्यक्रम का तीन चौथाई भाग पूरा हो गया और १९२२ तक रूसके समस्तबच्चों के लिये प्रारम्भिक शिक्षा का प्रबंध हो जायगा। राजशक्ति प्रजाके प्रतिनिधियों के हाथ में ही पहुंचने का कि जो प्रजा के दुखों को समझते हैं और अनुभव करते हैं, यह फल हुआ है। स्वराज्य की अत्यन्त आवश्यकता का यह केवल एक उदाहरण मैंने दिया है। ......कांग्रेस ने सुधार की योजना जो पेश की है उस की कुछ छोटी २ बातों में भले ही थोड़ा मत भेद हो परन्तु सरकार को समझ लेना चाहिये कि इस विषय में समस्त भारतवर्ष की एक पुकार है कि राजशक्ति गवर्नमेंट के हाथों से निकल कर अब जनता के हाथों में आनी चाहिये (हर्षध्वनि)। ३० वर्ष तक देश के लिये स्वार्थत्याग पूर्वक परिश्रम करने और देश के कुल भागों में कांग्रेस के ३१ अधिवेशनों के बाद हम लोग यह समझ गये हैं कि जिनके हाथों में शक्ति है वे उसे छोड़ना नहीं चाहते। यहां तक कि अधिकारी लोग—बृटिश

पार्लियामेन्ट के सदस्य-हमारे मामलों पर विचार करने के लिये अपना समय देने को भी राजी नहीं हैं और हमारी जो यह धारणा जम गई है वह हिल नहीं सकती। कोई यह न समझ ले कि जो सुधार आपने पेश किये हैं वे आपकी अभिलाषा की चरम सीमा हैं; पर वास्तव में हमारी यह मांग अल्पतम है—इससे कम पर हम राजी नहीं हो सकते। हमारे दयालु मित्र हमें सावधान करते हैं कि धीरे धीरे चलो। लेकिन हम लोग ३० वर्ष तक बहुत धीरे २ फूंक २ कर कदम रखते रहे। अब सिविलसर्विस का कोई आदमी या पार्लियामेन्ट का सदस्य यह नहीं कह सकता कि भारतवासी आज उचित से अधिक स्वराज्य मांग रहे हैं या लम्बी छलांग भरना चाहते हैं।......भारतीय सैनिकों ने युद्ध क्षेत्र में अपना खून बहाकर साबित करदिया है कि बीरता या राज भक्ति में वे इस पृथिवीतल पर किसी भी जाति या राष्ट्र के लोगों से हेठे नहीं हैं, फिर भी सेना के उच्च पदों का द्वार हम लोगों के लिये अभी तक नहीं खोला गया। यही दशा सिविल सर्विस की है। एक कमीशन नियुक्त किया गया, जिसने एक रिपोर्ट तैय्यार की और गवर्नमेण्ट के पास भेजी परन्तु वह इतनी भद्दी जान पड़ती है कि गवर्नमेण्ट ने अभी तक उसे सर्व-साधारण के सामने रखने में संकोच किया है। जब यह दशा है तब तुम किसी भी तरह आशा नहीं कर सकते कि बिना तुम्हारे हाथों राजशक्ति आये देश में कोई आवश्यक या उपयोगी सुधार हो सकेंगे। ३० वर्ष की मेहनत के बाद हमें यह विश्वास हो गया है और मैं आशा करता हूं कि इस विश्वास को कार्य में परिणत करने के लिये आप कोई प्रयत्न उठा न रक्खेंगे।

पांचवां अध्याय

संयुक्त-प्रांतीय व्यवस्थापक सभा

इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड में श्रीमान् मालवीय जी कई वर्ष तक मेंबर रहे। दो एक बार सर्व सम्मति से आप अपने यहां के म्युनिसपल वोर्ड के वाइसचेयर मेन भी बनाये गये। आपके प्रयत्नों से इलाहाबाद को बहुत लाभ पहुंचा। शहर की घनी वस्तियों को आपने म्युनिसपल वोर्ड में नये २ मसौदे पेश करके साफ करवाया, और साफ स्वच्छ नये मोहल्ले बसवाये। इलाहाबाद का लूकरगंज मोहल्ला आप के ही प्रयत्न का फल है। छोटे और बड़ों का आप एक समान सदैव विचार रखते थे। विपद ग्रस्तों को आप सब प्रकार की सहायता देते थे।

प्रयाग में जब पहले २ प्लेग (ताऊन) शुरु हुआ, शहर में बड़ी खल बली मच गई। बीमारी से घबड़ा कर पड़ोसी अपने पड़ोसी ही को भूल जाता था स्वामी नौकर को जरा सी हरारत होते ही घर जाने का किराया हवाले करता था। शहर में सन्नाटा फैल गया था। ऐसे कठिन समय में मालवीय जी अपने आराम की परवाह न कर मुहल्ले २ घूमते, बीमारों का पता लगाते, उनके घर वालों को सांत्वना देते, बोमार की दवा का प्रबन्ध कराते, घर को दवा से धुलवाते, वीमार को अस्पताल भिजवाते, और मुहल्ले वालों को समझा कर शहर

के बाहर रहने की सलाह देते थे। सरकारी अफ़सर इन सब बातों को करने में असमर्थ थे। क्योंकि प्लेग की विपत्ति से मनुष्य इतने घबड़ा गये थे कि सरकारी अफ़सरों और डाक्टरों पर विश्वास और श्रद्धा न रह गई थी। श्रीमान् मालवीय जी ने म्युनिसिपेल्टी की तरफ से शहर के बाहर हेल्थ-केम्प शहर से भागे हुवे मनुष्यों के रहने के लिये बनवाया था। सरकार इनके आत्मत्याग से बहुत प्रसन्न हुई और सन् १९०२ में जब पण्डित विश्वम्भरनाथ जी प्रांतीय कौंसिल से अलग हुये तब सरकार ने पण्डित मदनमोहन मालवीय जी को प्रांतीय कौन्सिल का सभासद् नियुक्त किया।

भारतवर्ष के प्रत्येक प्रांत में एक व्यवस्थापक सभा (लेजिस्लेटिव कौंसिल) रहती है। प्रांत के लाट साहब इस व्यवस्थापक सभा के सभापति रहा करते हैं। इस सभा में कुछ मेंबर (सभासद्) प्रजा के प्रतिनिधि होकर बैठते हैं और कुछ सरकार की ओर से नियुक्त किये जाते हैं। यह सभा प्रांत के लिये कानून बनाती है। साल के शुरू में प्रांतीय सरकार के खर्च का चिट्ठा (बजट) अर्थ सचिव व्यवस्थापक सभा में पेश करता है व्यवस्थापक सभा के मेंबर इस चिट्ठे पर अपने विचार प्रगट करते हैं और अपनी सलाह देते हैं। उन्हें यदि सरकारी काम के विषय में किसी प्रकार की पूंछ तांछ करना होती है तो वे इस व्यवस्थापक सभा में बैठ कर प्रश्न पूंछ सकते हैं। परन्तु सरकार व्यवस्थापक सभा के मेम्बरों की सलाह मानने के लिये बाध्य नहीं है। सन् १९०९ के सुधार के बाद से संयुक्त प्रांत की व्यवस्थापक सभा में २१ चुने हुवे मेंबर (१३ म्युनिसिपेल्टी और डिस्ट्रिक बोर्डों की

ओर से + १ आगरा के ज़मींदारो की ओर से + १ अवध के ताल्लुकेदारों की ओर से + १ इलाहाबाद यूनीवर्सिटी का प्रतिनिधि + १ अपर इंडिया चेम्बर आफ कामर्स कानपूर का प्रतिनिधि + ४ मुसलमान जाति के (प्रतिनिधि) और २८ सरकार के नियुक्त किये हुवे मेंबर (२० सरकारी नौकर + ६ गैर सरकारी + २ किसी खास विषय पर सलाह देने वाले) और १ सभापति प्रांतीय लाट हैं। इस प्रकार व्यवस्थापक सभा में ५० मेंबर होते हैं। परन्तु सन् १६०६ के पहले सन् १६०२ में प्रांतीय व्यवस्थापक सभा की दशा आज की ऐसी न थी। उसमें कुल १२ मेम्बर हुवा करते थे। वे सब सरकार के ही नियुक्त किये हुवे मेंबर होते थे। इनमें से अधिक अंगरेज और कुछ हिन्दुस्तानी मेंबर होते थे। उस समय की कौंसिल को आज कल के समान अधिकार भी न थे। वे सरकार के किसी काम की आलोचना न कर सकते थे। सरकार से प्रश्न न पूंछ सकते थे। वे केवल अपनी सलाह दे सकते थे सरकार चाहे, उनकी सलाह मानती या न मानती। वे प्रस्ताव पेश करके उस पर कौंसिल में वोट लेने के लिये नहीं कह सकते थे। कौंसिल में अधिकांश अगरेंज मेंबरों के होने के कारण हिन्दुस्तानी मेंबरों की सलाह भी कठिनाई से ही सुनी जा सकती थी। फिर सरकार के नियुक्त किये हुये मेंबर कि जो कौंसिल में अपनी स्थिति छोटे लाट की इच्छा पर ही निर्भर समझा करते थे; और जो कि अपनी किसी उपयोगिता के कारण नहीं बरन सम्मान के कारण कौंसिल में बैठते थे सरकार को ऐसी ही सलाह दिया करते थे कि जो सरकार को अच्छी लगे।

ऐसे समय में संयुक्त प्रांत की जनता का पक्ष दृढ़ता, योग्यता और प्रमाण के साथ समर्थन करने वाले प्रांतीय व्यवस्थापक कौंसिल में केवल एक श्रीमान मालवीय जी थे। कौंसिल में सन् १६०३ में सरकार ने 'बुंदेलखंड में जमीन की बेदखली' के कानून का मसविदा पेश किया। श्रीमान् मालवीय जी ने इस प्रस्ताव को राजनैतिक और सामाजिक सिद्धांतों के विरुद्ध सिद्ध कर इस प्रस्ताव का घोर प्रतिवाद किया। संयुक्त प्रांत के भूतपूर्व छोटेलाट सर आक्लैंड कालविन और सर चार्ल्स क्रासवेट वा माननीय मिस्टर इम्ये और माननीय मिस्टर कैडेल ऐसे महानुभावों के भी ऐसे ही विचार थे। श्रीमान् मालवीय जी ने सरकार को समझाया था कि बुंदेलखंड की प्रजा बिलकुल गरीब हो रही है और उस पर कर्ज भी दिन पर दिन बढ़ रहा है। इस गरीबी के कारण को जो कुछ सरकार समझती है वे नहीं हैं। इस कानून से लाभ के बदले जमीदारों और किसानों को हानि होगी उनकी जमीन का मूल्य घट जावेगा और उनकी साख उठ जावेगी। जमीन ही के सहारे जमींदारों को कर्ज मिल जाता है, जब जमींदारों को अपनी जमीन बेंचने का अख़्तियार ही न रह जावेगा तब उन्हें कोई कर्ज क्यों देगा। जब यह प्रस्ताव सरकार की ओर से पेश किया गया श्रीमान मालवीय जी ने व्यवस्थापक सभा में ताः १६ जनवरी सन १६०३ को इस कानून का विरोध करते हुवे अपनी वक्तृता में कहा कि "जमींदार से अपनी जमीन बेचने का अख्त्यार ले लेने और इनपर यह कायदा लगाने से कि जमीन बेंचने के लिये वे कलेक्टर की आज्ञा लें बुंदेलखंड में जमीन का मूल्य घट जावेगा। कर्ज लेने ही के लिये सिर्फ़ जमीन का

मूल्य नहीं घटेगा बरन बेचने और खरीदने के लिये भी जमीन का मूल्य घट जावेगा। नये कानून के अनुसार जमींदार अपनी जमीन जिसको चाहे उसे नहीं बेंच सकता। पहले तो उसे कलेक्टर साहब की आज्ञा लेनी पड़ेगी। फिर कानून के अनुसार जमीन वह अपने ही कुटुंबी या जात वालों के हाथ बेंच सकता है। जिसके कारण उसे मूल्य भी कम मिलेगा। लाट साहेब! आप जानते हैं कि बुंदेलखंड के जमींदार मालदार नहीं है। इस कानून के पास करने से बुंदेलखंड में ब्याज की दर बढ़ जावेगी। जिसका फल यह होगा कि किसान खेतों को उपजाऊ बनाने के लिये अधिक धन उधार न ले सकेंगे। यह सब को ज्ञात ही है कि बुंदेलखंड में किसान निर्धनता के कारण जमीन को उपजाऊ बनाने में पूंजी नहीं लगा सके हैं। इस कानून से यह व्यथा और भी बढ़ जावेगी।"

इस कानून से जो हानि बुंदेलखंड को हुई है, वह बुंदेलखंड के वासी ही जानते हैं। सन १९१६ में झांसी में होने वाली प्रांतीय औद्योगिक कानफरेंस में कई सज्जनों ने इस कानून के नुकसान दिखलाये थे। संयोग समितियों के प्रचार में इस कानून से भारी रुकावट पहुंच रही है। छोटे २ जमींदारों को कर्जा मिलने में बड़ी ही कठिनाई होती है। यदि कोई करजा देता भी है तो वह साहूकार जमींदार से कर्जा वसूल करने में बहुत जल्दी करता है और फसल या किसान के गाय बैल भैंस इत्यादि ही बेंच कर अपना कर्जा वसूल करने का प्रयत्न करता है। जिससे किसानों और छोटे जमींदारों की दशा और भी खराब हो रही है। किसान का काम बिना कर्जा लिये चलता नहीं है, यदि कर्जा भी न मिल सके

तो उसकी दशा कितनी शोचनीय हो जाती है यह किसी को समझाना नहीं है। निश्चय ही बुंदेलखंड की रैय्यत की गरीबी इस कानून की अपेक्षा कहीं अधिक मिट जाती यदि सरकार सरकारी लगान घटा देती। और किसानों के लिये पूंजी लगा कर जमीन उपजाऊ बनाने के लिये इजिप्ट के समान लंबी मियाद वाले कर्ज़ कम व्याज पर दिलवाने का सरकारी बंकों से प्रबंध करती। सिंचाई का उचित प्रबंध करती। कृषि संबधी शिक्षा का प्रचार करती। बुंदेलखंड के गावों को देखने से जान पड़ता है कि हिन्दू राज्य में इस प्रांत में तालाबों से सिंचाई हुवा करती थी। बुंदेलखंड के प्रत्येक गावों में एक दो या इससे भी अधिक तालाब आज भी टूटी फूटी दशा में बने हैं। परन्तु तलाबों से खेती की सींच की प्रथा अब यहां उठ सी गईहै। तालाब पट गये हैं बहुतों में गरमियों में पानी भी नहीं रहता। सयुक्तप्रान्त में क्या हिन्दुस्तान भर में बुदेंलखंड ही ऐसा भाग है जहां सबसे अधिक अकाल पड़े हैं। अकालों के कारण यहां ही प्रजा तबाह होगई है। सरकार को इस प्रांत की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

प्रांतीय कौंसिल में सरकारी मसविदों पर श्रीमान् मालवीय जी की वक्तृता बड़ी प्रभावशाली तो हुवा ही करती थी परन्तु सालाना वजट के समय मालवीय जी की जो वक्तृता होती थी वह बड़े गौरव और महत्व की रहती थी। इन वक्तृताओं में श्रीमान् मालवीय जी शिक्षा प्रचार में अधिक रुपया व्यय करने के लिये सरकार पर बराबर ज़ोर डाला करते थे। पुलीस में सुप्रबन्ध की आवश्यक्ता थी। श्रीमन्

मालवीय जी सरकार को समझाया करते थे। सरकारी नौकरी में भारतवासियों को उच्चस्थान मिलने, कलक्टरी का इम्तिहान भारतवर्ष में होने, प्रजा के स्वास्थ्य संबन्धी सुधार करने, और सरकार की ओर से म्युनिसेपल बोर्ड और डिस्ट्रिक बोर्डों को अधिक रुपया मिलने के लिये श्रीमान मालवीय जी ने प्रति वर्ष सरकार पर जोर डाला। सरकार ने आपकी कई बातें नहीं मानीं परन्तु कई मानी भी।

मार्च सन् १६०४ में सालाना बजट के समय श्रीमान् मालवीय जी ने प्रांतीय कौंसिल में अपनी वक्तृता में कहा था कि "इस समय जबकि भारतवर्ष के सब प्रांतो में शिक्षा प्रचार का प्रयत्न किया जारहा है संयुक्त प्रांत पीछे पड़ा हुवा है। बंबई और बंगाल प्रांत में स्कूल जाने योग्य १०० लड़कों में से २२ लड़के स्कूलों में पढ़ते हैं, परन्तु संयुक्त प्रांत में प्रत्येक १०० लड़कों में से केवल १० लड़के स्कूल में पढ़ते हैं। संयुक्तप्रांत को जो कि हिन्दू और मुसलमान राज्यकाल में भारतवर्ष में विद्या का केन्द्र माना जाता था आज विद्या में सब से पीछे पडे रहने का लांछन सहना पड़ता है।"

सन् १६०६ में सालाना बजट के समय वक्तृता देते हुवे श्रीमान मालवीय जी ने शिक्षा में खर्च की रकम बढ़ाने के लिये सरकार से फिर अनुरोध किया। आपने अपनी वक्तृता में कहा था कि "अन्य प्रांतों की अपेक्षा संयुक्तप्रांत में विद्या प्रचार में रुपया बहुत कम खर्च किया जाता है। प्रत्येक एक हजार मनुष्य पीछे बंबई प्रांत में २४५ रु० प्रति वर्ष विद्या प्रचार में खर्च किया जाता है परन्तु प्रत्येक हज़ार मनुष्य पीछे संयुक्तप्रांत में वर्ष भर में केवल ८० रुपये खर्च किये जाते हैं।"

इसी विषय और इसी अवसर पर सन् १६०७ में कौंसिल में वक्तृता देते हुवे श्रीमान मालवीय जी ने फिर सरकार को संयुक्तप्रांत में विद्या के अधिक प्रचार की आवश्यकता समझायी। इस अवसर पर श्रीमान मालवीय जी ने संयुक्तप्रांत में शिक्षा की जो दशा है उससे संयुक्त प्रांत के बराबर जनसंख्या वाले जापान देश की शिक्षा की दशा से मिलान किया। आपने अपनी वक्तृता में कहा था कि "इस विषय में जापान ने पिछले केवल ३० वर्षों में जो उन्नति की है उसकी ओर हमें ध्यान देना चाहिये। तीस वर्ष पहले के जापान में तीस वर्ष पहले के संयुक्त प्रांत से शिक्षा का प्रचार कम था। परन्तु सन् १६०२ में जापान में २७००० प्राइमरी (प्रारम्भिक शिक्षा देने वाले) स्कूल थे। इन स्कूलों में पढ़ने वाले बालकों की संख्या ५० लाख से अधिक थी। परन्तु संयुक्त प्रांत में सन् १६०६ में केवल ८,७६६ प्राइमरी स्कूल थे। इन स्कूलों में शिक्षा पाने वाले बालकों की संख्या केवल ४ लाख ११ हजार के लगभग थी। प्राइमरी शिक्षा के लिये जापान में सन् १६०२ तक ५ करोड़ रुपया प्रति वर्ष व्यय किया जाया करता था परन्तु इस सयुक्तप्रांत में प्राइमरी शिक्षा के लिये केवल १४ लाख रुपया प्रति वर्ष खर्च किया जाता है।"

सन् १६०८ में संयुक्त प्रांत की सरकार ने पुलीस का खर्च बढ़ा दिया था। ऐसे समय में कि जब सारा देश शिक्षा के प्रचार के लिये आन्दोलन कर रहा है, सरकार की यह नीति कि शिक्षा विभाग के लिये पूरी तौर पर खर्च न बढ़ा कर पुलीस के खर्चको बढ़ा देना अनुपयुक्त और असंगत जान पड़ताथा। इस समय पर श्रीमान मालवीय जी ने प्रान्तीय सरकार को

इस असंगत नीतिके अवलम्बन से सावधान रहने के लिये कड़े शब्दों में सरकार का ध्यान प्रजा के विचारों की ओर आकर्षित किया था। आपने कहा था कि "आज से आगे जनता को इस बात के विश्वास करने में कठिनाई होगी कि सरकार शिक्षा का प्रचार करके हमारी उन्नति और समृद्धि सत्य हृदय से चाहती है। जनता यह देख कर कि सरकार इस वर्ष १ करोड़ रुपया पुलीस विभाग में खर्च करने के लिये तैय्यार है और शिक्षा विभाग को केवल ४३$\frac{१}{४}$ लाख रुपया इस साल के खर्च के लिये देगी, यदि सरकार की शिक्षा सम्बन्धी घोषणाओं की सत्यता में संदेह करने लगे, तो कोई जनता को दोषी न ठहरा सकेगा।"

श्रीमान मालवीय जी प्राँतीय कौंसिल में प्रति वर्ष सरकार का ध्यान देश की प्रधान आवश्यकता शिक्षा प्रचार के लिये आकर्षित करते रहे। सरकार की नीति पर मालवीय जी की वक्तृताओं के कारण बहुत कुछ समय २ पर परिवर्त्तन होता रहा है।

भारतवर्ष में प्रत्येक १०० मनुष्यों में से ७१ मनुष्यों का जीवन कृषी पर निर्भर रहता है। और इगलेंड में १०० पीछे केवल ८ मनुष्य कृषि पर निर्भर रहते हैं। जिस देश में अधिकाँश प्रजा का एक ही रोजगार होता है वहाँ यदि उस रोजगार में किसी प्रकार की हानि पहुंचाती है तो देश की अधिकाँश प्रजा विपत्ति में पड़जाती है। परन्तु जिस देश में कई रोजगार और कई हीले होते हैं वहां यदि किसी समय में किसी एक रोजगार में हानि पहुंचती भी है तो देश में

रहने वालों का एक छोटा सा भाग केवल हानि सहता है। इस लिए आधुनिक देशों की यह नीति है कि प्रत्येक देश में तरह २ के रोजगार तरह २ के व्यापार और व्यवसाय होने चाहिये। जैसे किसी एक मनुष्य के लिए सारी पूंजी किसी एक बङ्क या साहूकार के यहां जमा करने की अपेक्षा थोड़ी २ कई बङ्कों में जमा करना या कई प्रकार की कम्पनियों में लगाना हितकर है वैसेही यह देश के लिए आवश्यक है कि उस देश में मनुष्य कई प्रकार के रोजगार से अपना सम्बन्ध रखते हों। इङ्गलेन्ड व अन्य योरोपीय देशों में कई प्रकार के रोजगार हैं। परन्तु भारतवर्ष में मुख्य रोजगार कृषी है। यदि एक वर्ष पानी नहीं बरसता है तो प्रत्येक १०० मनुष्य पीछे ७१ मनुष्य आपत्ति में पड़ जाते हैं। इन ७१ में आधे की दशा तो ऐसी है कि खेती बिगड़ने पर जीवित रहना कठिन हो जाता है। यही कारण है कि हमारे देश में अकाल सामने ही खड़े रहते हैं। श्रीमान मालवीय जी किसानों की दशा सुधारने और देश को अकाल की विपत्ति से मुक्त करने के लिए सरकार से लगान घटाने, सिंचाई का इन्तजाम करने, कृषि शिक्षा का प्रचार करने, और देशी कारीगरी की उन्नति करने के लिए अनुरोध करते आये हैं। सन् १९०८ में संयुक्त-प्रांतीय व्यवस्थापक सभा में बजट के समय वक्तृता देते हुए श्रीमान मालवीय जी ने कहा था कि :—

"………भारतवासियों की गरीबी और सूखे में उनकी तबाही का मुख्य कारण यह है कि अधिकांश प्रजा कृषी पर निर्भर रहती है। जितने पिछले अकाल पड़े हैं उनसे यह बात निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है। दुख है कि इतना समय व्यतीत

हो जाने पर अभी तक सरकार नये २ रोजगार देश में स्थापित न कर सकी कि जिनमें लग जाने से कृषी पर निर्भर रहने वालों की भी संख्या घट जाती। खेती से अलग हो कारखानों और नये २ व्यवसायों में लग कुछ प्रजा अपना जीवन सुख से व्यतीत करने लगती। जब तक यह न किया जावेगा भारत-वासियों की साम्पत्तिक दशा नहीं सुधर सकती है। मुझे आशा है कि सरकार शीघ्र ही इस ओर ध्यान देगी। इसके कहने की आवश्यकता नहीं कि प्रजा की अपेक्षा सरकार ही कहीं अधिक सुधार देश की दशा में कारीगरी की उन्नति द्वारा कर सकती है। यह बात अब सब मानने लगे हैं कि देश की सरकार का यह कर्तव्य है कि वह देश की कारीगरी को सहायता दे उसकी उन्नति करे।"

अन्यदेशों में कारीगरी सिखलाने के लिये सरकार की ओर से स्कूल खोले गये हैं। जापान की सरकार ने जापान में कई औद्योगिक महाविद्यालय खोले हैं। श्रीमान मालवीय जीने संयुक्तप्रांत की सरकार से सन् १९०७ की बजट वक्तृता में संयुक्तप्रांत में भी एक औद्योगिक महा विद्यालय खोलने के लिये अनुरोध किया था। लखनऊ में एक औद्योगिक (इण्ड-स्ट्रियल) स्कूल खुल भी गया है। परन्तु इस स्कूल से प्रांतकी कमी पूरी नहीं होती है। लगभग दस वर्ष हुये कि प्रांतीय सरकार ने कानपूर में एक बड़ा (टेकनिकल) स्कूल खोलने की अपनी मंशा जाहिर की थी। भारत सचिव ने इस की मंजूर भी देदी थी परन्तु न जाने किन कारणों से यह स्कूल अभ तक नहीं खोला गया। आशा है इस संसार व्यापी युद्ध के बाद निश्चय ही यह खुल जावेगा।

सन् १९०६ में प्रांतीय कौंसिल में वक्तृता देते हुये श्रीमान् मालवीयजी ने कहा था कि "मैं अब सरकारी नौकरी में भारत वासियों के स्थान के संबन्ध में कुछ कहना चाहता हूं। जनता में यह विश्वास फैलता जाता है कि सरकार भारतवासियों को योग्यता होने पर भी ऊंचे ओहदे नहीं देती है। इस प्रांत के हाईकोर्ट में ६ जज हैं। इनमें भारतवासी केवल १ है। मद्रास के हाईकोर्ट में ६ जजों मेंसे दो जज भारतवासी हैं लखनऊ के जुडीशियल कमिशनर के कोर्ट में ३ जज हैं इनमें से भारतवासी एक भी नहीं हैं।" प्रांतीय सरकार ने जनता के प्रतिनिधि मालवीय जी की यह बात पूरी तौर से मानली और अब इलाहाबाद के हाईकोर्ट में ६ में से २ जज भारत॰ वासी हैं और इसी प्रकार लखनऊ के जुडीशलकमिशनर के कोर्ट में ३ में से १ जज भारतवासी है।

सन् १९०९ में भारतवर्ष की व्यस्थापक सभा संबन्धी सुधार हुआ। अभी तक वाइसराय की व्यवस्थापक सभा में भारत सरकार प्रांतीय मेम्बर नियुक्त कर लिया करती थी। सन् १९०९ में प्रांतीय व्यवस्थापक सभा से २ प्रतिनिधि चुने जाकर भारतीय व्यवस्थापक सभा में भेजे जाने का नियम बना। इस सुधार के वाद नई भारतीय व्यवस्थापक सभा के लिये संयुक्तप्रांत से मेंबर चुनने का जब समय आया संयुक्तप्रांत की व्यवस्थापक सभा ने माननीय पण्डित मदन मोहन जी मालवीय और माननीय राय श्रीराम बहादुर को अपना प्रतिनिधि चुना। सन् १९०९से आज तक माननीय मालवीय जी भारतीय व्यवस्थापक कौंसिल में मेंबर बरावर संयुक्त प्रांत की ओर से चुने जाते हैं।

छठवाँ अध्याय

भारतीय व्यवस्थापक सभा में श्रीमान मालवीय जी

जैसे प्रत्येक प्रांत में प्रांत २ की एक व्यवस्थापक सभा होती है वैसे ही समस्त भारतबर्ष के लिये भी एक भारतीय व्यवस्थापक सभा (लेजिसलेटिव कौंसिल) रहती है। इस सभा में ६० मेंबर होते हैं। बड़े लाट वाइसराय महोदय इस व्यवस्थापक सभा के सभापति रहते हैं। गदर के बाद सन् १८६१ में महारानी विक्टोरिया ने भारतवर्ष के सुशासन के विचार से यह उचित समझा कि भारतवर्ष पर शासन करने वाले वाइसराय को भारतवर्ष के लिये कानून बनाने के समय भारतवासियों की भी सलाह ले लेना जरूरी है। इसी उद्देश से सन् १८६१ में यह कानून बना कि वाइसराय कानून बनाते समय १२ मेंबर और नियुक्त कर लिया करें जिसमें से कम से कम ६ मेंबर सरकारी नौकर जरूर हों। भारतीय एग-जीक्यूटिव (कार्यकारिणी समिति) कौंसिल के—सदस्य भी इस व्यवस्थापक कौंसिल के मेंबर रहते थे। इस प्रकार व्यवस्थापक कौंसिल में सरकारी मेंबरों की संख्या गैर सर-कारी मेंबरों की अपेक्षा लगभग दूनी रहती थी।

इस प्रकार की व्यवस्थापक कौंसिल में भारतवासी मेंबरों की बात सरकारी मेंबरों की मेजारिटी (अधिक संख्या) होने से सुनी नहीं जाया करती थी। कांग्रेस देश में सन् १८८५ में

स्थापित हो चुकी थी। कांग्रेस ने इसके लिये आन्दोलन शुरू किया कि सरकारी नौकरियों में भारतवासियों को अधिक भाग मिलना चाहिये, और भारतवर्ष के शासन में भारतवासियों को भी शामिल करना चाहिये। ७ वर्ष के आन्दोलन के बाद इंगलैंड की जनता में भारतवासियों की बात सुनी गई और सन् १८९२ में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने यह कानून पास किया कि वाइसराय भारतीय व्यवस्थापक-सभा के लिये अब १६ मेंबर नियुक्त किया करें जिसमें से अधिक से अधिक ६ सरकारी मेंबर हों। इस प्रकार गैर सरकारी मेंबरों की संख्या ६ से बढ़ कर १० हो गई। अब कौंसिल को यह भी अधिकार दिया गया कि कौंसिल सलाना बजट (खर्च के चिट्ठे) पर भी पूंछ ताछ कर सकती है।

परन्तु भारत ऐसे बड़े देश में केवल १० प्रतिनिधि अर्थात् तीन करोड़ मनुष्यों का एक प्रतिनिधि एक हंसी की सी बात है। फिर उस व्यवस्थापक सभा का संगठन ऐसा कि उसमें सरकारी नौकरों की अधिकता होने के कारण, यदि भारतवासी मेंबर अपने देश के लिये कोई उपयोगी कानून बनाना चाहें तो सरकारी मेंबरों के विरोध के कारण बना न पावें। काँग्रेस ने सरकार को ६ मेंबरों से सख्या बढ़ा कर १० करने के लिये धन्यवाद दिया, परन्तु १० की संख्या को भी कम बतलाकर अपना आन्दोलन जारी रखा। लार्ड कर्जन (१८९९-१९०५) के कृत्यों से भारत वर्ष में ऐसा भारी असन्तोष फैल गया कि जनता में यह विश्वास ही उठने लगा कि ब्रिटिश गवर्नमेंट का यह उद्देश है कि भारतवर्ष के शासन में भारत वासियों को भाग दे और

उनकी सलाह से उनके हित के लिये भारत का शासन करे। देश के असन्तोष और कांग्रेस के आन्दोलन के कारण बृटिश जनता ने सन् १६०६ में फिर सुधार किये कि जिनसे वाइसराय की एगजिक्यूटिव कौंसिल में जिसमें सभापति वाइसराय को छोड़ कर ७ मेंबर हैं एक भारतवासी मेंबर नियुक्त किया गया। सर सत्येन्द्रप्रसन्नसिंह वाइसराय की एगज़ीक्यूटिव कौंसिल के पहले मेंवर नियुक्त किये गये। वाइसराय की व्यवस्थायक कौंसिल के भारतीय मेंबरों की संख्या बढ़ा कर ६० की गई। इन ६० के सिवाय एगज़ीक्यूटिव कौंसिल के ७ मेंबर भी व्यवस्थापक सभा में मेंबर होकर बैठते हैं। ६० मेंबरों में से ३५ मेंबर सरकार स्वयं नियुक्त करती है और २५ मेंबर प्रजा द्वारा चुने जाकर इम्पीरियल लेजिसलेटिव कौंसिल में बैठते हैं। इन २५ में से २ मेंबर संयुक्तप्रान्त की व्यवस्थापक सभा के गैर सरकारी मेंबरों द्वारा चुने, जाते हैं और वे भारतीय व्यवस्थापक सभा में संयुक्तप्राँत के प्रतिनिधि कहे जाते हैं। अन्य प्राँतों को भी इसी प्रकार अपने प्रतिनिधि, भारतीय व्यवस्थापक सभा में भेजने का अधिकार है।

ग्रेट ब्रिटेन (इङ्गलैंड स्काटलैंड) और आयरलैंड की मनुष्य संख्या लगभग ४॥ करोड़ है। साढ़े चार करोड़ की जनता के ६७० प्रतिनिधि चुने जाकर पार्लियामेंट (कामन्स) में बैठते हैं। ब्रिटिश भारतवर्ष (देशी रियासतों को छोड़ कर) की मनुष्य सन्ख्या लगभग २४$\frac{१}{४}$ करोड़ है और इतनी बड़ी जनता के केवल २५ प्रतिनिधि चुने जाते हैं। ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड की मनुष्य सन्ख्या संयुक्त प्राँत की मनुष्य संख्या

के बराबर है। परन्तु ग्रेट बृटेन की जनता के ६७० प्रतिनिधि बृटिश पार्लियामेंट में बैठते हैं और संयुक्त प्रांत की जनता के केवल २ प्रतिनिधि भारतीय व्यवस्थापक सभा में बैठते हैं। बृटिश पार्लियामेंट में बैठने वाले प्रजा के प्रतिनिधि बहुमत से प्रधान मन्त्री तक को देश के शासन से निकाल सकते हैं, देश में आने अथवा जाने वाले माल पर मन माना कर लगा सकते हैं, शिक्षा के लिये राज्य आय से मन माना रुपया खर्च करा सकते हैं। परन्तु भारतवर्ष के सब प्रतिनिधि भारतीय व्यवस्थापक सभा में सरकारी अफसरों की अधिकता होने के कारण जिन बात को सरकारी अफ़सर नहीं चाहते नहीं कर सकते। सरकारी अफसरों के विरोध के कारण हमारे नेताओं के उपस्थित किये हुए महा उपयोगी प्रस्ताव पास नहीं हो सके हैं। पिछले वर्षों में कांग्रेस के वैध आन्दोलन से अब फिर आशा है कि शीघ्र ही भारतीय शासन प्रणाली में जोर का सुधार होने वाला है जिससे आशा की जाती है कि भारतवासियों को अपने देश के शासन में विशेष भाग मिल जावेगा।

सन् १९०९ के सुधार होने पर संयुक्त प्रांत की व्यवस्थापक सभा के प्रजा प्रतिनिधियों ने श्रीमान् मालवीय जी को अपना प्रतिनिधि चुनकर भारतीय व्यवस्थापक सभा में भेजा। श्रीमान् मालवीय जी ने भारतीय व्यवस्थापक सभा में अपनी प्रभावशाली वक्तृताओं और सामयिक सलाहों द्वारा जिस प्रकार भारत सरकार की शासन नीति में समय २ पर परिवर्तन करते रहे हैं—और हमें आशा है कि ईश्वर की कृपा से अभी वे कितने ही वर्ष तक करते रहेंगे—इसके लिये संयुक्त प्रांत की ही जनता क्या सारे भारतवर्ष की जनता उन से उऋण न हो

सकेगी। जिस आत्म त्याग के साथ वे भारत माता की सेवा में अपना जीवन लगा रहे हैं वह आदर्श जीवन है। सन् १९०६ से आज पर्य्यन्त वे बराबर संयुक्तप्रांत के प्रतिनिधि बनकर भारत की व्यवस्थापक सभा में बैठते रहे और पूरी योग्यता से अपना कर्त्तव्य पालन करते रहे हैं। सरकार और सरकारी अफसरों द्वारा कई बार निरुत्साहित किये जाने पर भी प्रजा का संदेश और प्रजा के सत्य विचार उन्होंने सरकार के सामने रखे हैं। प्रजा का विश्वास और प्रजा की श्रद्धा उनपर दिन पर दिन बढ़ती जाती है। अब वे किसी प्रांत व जातिके नहीं वरन समस्त भारतवर्ष के नेता और आदर्श हैं।

सन् १९१२ में जब स्वर्गवासी माननीय गोपाल कृष्ण गोखले ने प्रारंभिक शिक्षा मुफ़्त और अनिवार्य कर देने का मसविदा भारतीय व्यवस्थापक कौंसिल में पेश किया था श्रीमान् मालवीय जी ने मिस्टर गोखले के प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुये व प्रतिपक्षियों को मुह तोड़ जवाब देते हुये कहा था कि "प्रत्येक सभ्य सरकार का निश्चय ही पहला कर्त्तव्य यह है कि देश में शांति और न्याय स्थापित करें परन्तु इस कार्य्य के बाद मुख्य कर्त्तव्य प्रत्येक सभ्य सरकार का यही है कि वह देश से अविद्या अंधकार दूर करे, देश को दरिद्रता से मुक्त करे, और देशवासियों की व्यथा दूर करे तथा अत्याचारों से रक्षा करे। इस कर्त्तव्य का भार देश की सरकार के सिर पर रहा करता है। सरकार का यह कर्त्तव्य है कि वह शिक्षा प्रचार के लिये जैसे बने सरकारी चिट्ठे में से रुपया निकालकर शिक्षा प्रचार में ख़र्च करे। जिस प्रकार सरकार को देश में ज़ुल्म

दबाने और शांति स्थापन करने के लिये रुपया निकालने और व्यय करने की चिन्ता रहती है उसी प्रकार शिक्षा प्रचार के लिये भी सरकार को ध्यान देना चाहिये। माननीय सज्जनों! हमारे देश वासी अविद्या के कारण नाना प्रकार की आपत्तियों और छल छन्दों में फंस जाते हैं जिनसे हम सहज में उन्हें बचा सकते हैं। करोड़ों भारतवासी ऐसी मृत्यु में मरते हैं कि जिनसे हम सहज में उनकी रक्षा कर सकते हैं। करोड़ों ऐसी शोचनीय दशा में अपना दुःखमय जीवन व्यतीत करते हैं कि जिसमें प्रयत्न करने से बहुत कुछ सुधार हो सकता है। रोज़ाना के कामों में उन्हें ऐसी २ कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती हैं और ऐसे असुविधाओं और धोखेबाजियों का सामना करना पड़ता है कि यदि हम उन्हें थोड़ी भी शिक्षा देदें तो वे इन आपत्तियों से अपनी रक्षा करलें। संसार की प्रधान सभ्य सरकार की छत्र छाया का उन्हें सुविधा है। इस सरकार का काम संसार के सभ्य और उदार सिद्धान्तों के अनुसार चलता है। इस सरकार ने बड़े प्रयत्न से गरीब प्रजा की दशा सुधारने का प्रयत्न देहात में पंचायती बंक और संयोग समिति स्थापित करके किया है। परन्तु प्रजा अशिक्षता के अन्धकार में डूबे रहने के कारण सरकार के किये हुये उपकारों से लाभ नहीं उठा सकी है। यदि सरकार चाहती है कि उसके किये हुये अच्छे २ कामों से प्रजा को कुछ लाभ हो तो सरकार के लिये आवश्यक है कि सरकार अनिवार्य शिक्षा का प्रचार करे। प्रजा की दशा सुधारने के लिये और उनके दुखों को कम करने के लिये शिक्षा प्रचार ही केवल एक मात्र युक्ति है। इसीलिये सरकार का यह प्रधान कर्तव्य है

कि वह प्रजा में शिक्षा रूपी उजेले को सुलभ करदे और उसे यह चाहिये कि शिक्षा प्रचार के लिये कितने ही धन की आवश्यकता हो वह उसके लिये आना कानी या संकोच न किया करे। सन् १८८३ में जब 'एज्यूकेशन' (शिक्षा) कमीशन ने रिपोर्ट पेश की थी तब से सरकार की आय अब बहुत बढ़ गई है। सरकारी खर्च भी अब बहुत बढ़ गया है। मैं समझता हूं कि फौज़ी और मुल्की विभागों में ही खर्च अब पहले से लगभग २० करोड़ रुपये बढ़ गया है। मिस्टर गोखले ने हिसाब लगाकर यह अंदाज किया है कि यदि देश में कुल स्कूल जाने योग्य उमर के लड़के और लड़कियां पढ़ाने का प्रबन्ध किया जावेगा तो सालाने खर्च में केवल ४॥ करोड़ रुपये की बढ़ती होगी। माननीय शिक्षा विभाग के मंत्री ने अंदाज लगाया है कि इससे सालाना खर्च में लगभग ९ करोड़ की बढ़ती होजावेगी। शिक्षा सचिव की बात मानते हुये यदि हम मानलें कि देशके प्रत्येक बालक तक शिक्षा रूपी अमूल्य रत्न पहुंचाने के लिये हमें १० करोड़ रुपया सालाना का खर्च बढ़ाना पड़ेगा तो मैं इसे भारत सरकार के लिये कोई ऐसी बड़ी रकम नहीं मानता हूं कि जो भारत सरकार को न मिल सकती हो। यह रकम एकही साल में तो बढ़ा ही न लेना होगा, न पांच ही साल में इसके बढ़ाने की जरूरत है, हम इसे दससाल तक में बढ़ा सकते हैं। अगर सरकारी खर्च को घटाने से या सालाना बढ़ती से इतनी रकम न निकल सकेगी तो हम अपने ऊपर नया कर लगाकर भारत सरकार को यह रुपया देंगे। इस उद्देश के लिये हम अपने ऊपर का सरकारी कर भी बढ़ाने के लिये तैय्यार हैं। जैसा

कि हमारे मित्र ने कहा है विदेशी माल पर केवल २ रुपया सैकड़े की चुंगी लगाने से अनिवार्य शिक्षा के लिये प्रति वर्ष ऊपर बतलायी हुई आवश्यकीय रकम निकल आवेगी। हम अपने देश से विदेश को सन् भेजते हैं। यदि विदेश को जाने वाले सन् पर हम केवल ५ रुपये सैकड़े कर लगा दें तो हमें इस कार्य के लिये पर्याप्त रुपया मिल जावेगा। विदेश से विदेशी शक्कर हमारे देश में प्रत्येक वर्ष करोड़ों रुपये की आती है यदि इस पर ही हम चुंगी बढ़ा दें तो ऊपर कही हुई रकम निकल आवेगी। और सब से आखीर में—यद्यपि कहने में दुख होता है—हम नमक पर के कर को बढ़ाने के लिये तैय्यार हो जावेंगे। परन्तु इस दशा को जो आज कल हमारे देश में है, कि जिसके कारण हमारे बालकों में से १०० पीछे ६४ बालक निरक्षर हैं हम मिटाने का प्रयत्न करेंगे।"

मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रस्ताव भारतीय व्यवस्थापक सभा में पास नहीं हो सका। परन्तु तब से सरकार ने शिक्षा के खर्च की रकम में कुछ बढ़ती की है। इस थोड़ी सी बढ़ती से भारतवासियों को संतोष नहीं हो सकता है इसलिए आशा है कि हमारे प्रतिनिधि फिर इस विषय पर जोर देकर जितना जल्दी हो सकेगा भारतवर्ष में प्रत्येक बालक और बालिकाओं के लिए कमसे कम प्राथमिक शिक्षा मुफ़्त और अनिवार्य करा कर सुलभ कर देंगे। संसार के सारे सभ्य देशों में शिक्षा का प्रबन्ध गरीब से गरीब बालक और बालिका के लिए हो चुका है। "ग्रेट ब्रिटेन और आयर्लैंड, फ्रांस, जरमनी, स्विटजर्लैंड, आष्ट्रिया, हंगेरी, इटाली, बेलजियम, डेनमार्क, नारवे, स्वेडन

अमेरिका का संयुक्तराज्य, कनाडा, आस्ट्रेलिया और जापान में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य और मुफ़्त है।" "हालैंड में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य है यद्यपि वह मुफ़्त नहीं दी जाती है। स्पेन, पोर्चुगाल, ग्रीस, बलगेरिया, सरविया और रोमानियां में प्रारम्भिक शिक्षा मुफ्त दी जाती है और सरकारी कानून के अनुसार वह अनिवार्य भी है यद्यपि वहां यह कानून सख्ती के साथ नहीं चलाया जाता तुर्की में प्राथमिक शिक्षा मुफ़्त है और कहने भर के लिये अनिवार्य भी है। रूस में यद्यपि वह अनिवार्य नहीं है परन्तु बहुत कुछ मुफ़्त है। अब यदि हम इस बात का विचार करें कि अन्य देशों में प्राथमिक शिक्षा के लिये प्रत्येक मनुष्य के हिसाब से औसत रकम क्या खर्च की जाती है तो भारत वर्ष का वहां कहीं पता ही नहीं चलता है। संयुक्त देश अमेरिका में प्रत्येक मनुष्य पीछे औसत रकम १२ रुपये स्विटजरलैंड में १० रु० ४ आना; आस्ट्रेलिया में ८ रु० ८ आना; इङ्गलैंड और वेल्स में ७ रु० ८ आना; कनाड़ा में ७ रु० ४ आना स्काटलैंड में ७ रु० ३॥ आना; जर्मनी में ५ रु० २ आना आयरलैंड में ४ रु० १३ आना नीदरलैंड ४ रु० ८ आना; स्वीडेन में ४ रु० ३ आना; वेलजियम में ४ रु० नारवे में ३ रु० १३ आना; फ्रांस में ३ रु० १० आना आस्ट्रिया में २ रु० ५॥ आना, स्पेन १ रु० ६ आना; इटली १ रु० ३॥ आ०; सर्विया और जापान में १४ आना; रूस में ७॥ आना; परन्तु भारतवर्ष में १ आना से भी कुछ कम प्रत्येक वर्ष खर्च की जाती है।"*

* स्वर्गवासी श्रीमान् गोखले की भारतीय व्यवस्थापक सभा में वक्तृता।

माननीय मालवीय जी सदैव इस बात का प्रयत्न करते रहे हैं कि भारतीय कारीगरी और कला कौशल की वृद्धि हो, देशी कारीगर सुखी रहें और देश की जरूरतों के लिये कपड़ा, शक्कर इत्यादि सब आवश्यकीय वस्तुएँ स्वदेश में ही तैय्यार हुवा करें। इलाहाबाद की शक्कर का कारखाना जो सन् १६०६ में स्थापित किया गया था मालवीय जी के ही प्रयत्न का फल था। समय २ पर सरकार का ध्यान श्रीमान् मालवीय जी भारत वर्ष में कारीगरी को उन्नति करने के लिये आकर्षित करते रहे हैं। सन् १६१४ में लड़ाई शुरू होजाने से बहुत सा विदेशी माल भारत वर्ष में आना बंद होगया। कुछ माल की कमी होगई। शत्रु देशों से माल आना बिलकुल बंद होगया। इस प्रकार भारतीय कारीगरों को कुछ मौका था कि भारत वर्ष की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिये स्वदेश में ही माल तैय्यार करते। विदेश से माल कम आने के कारण प्रत्येक वस्तु का मूल्य भी बढ़ गया था इस कारण भारतीय कारीगर को अच्छा मौका था कि अगर नये सिरे से कार्य शुरू करने के कारण नया माल महंगा भी पड़ता तो तेज भाव के कारण वह माल बाजार में बिक सकता और इस प्रकार नये कारखाने चल निकलते। श्रीमान् मालवीय जी ने इसी उद्देश से भारत सरकार को ६ मार्च सन् १६१५ को यह सलाह दी थी कि भारत सरकार १२ लाख रुपया सन् १६१५ में देशी कारीगरों के मदद करने में लगावे। किसी को पूंजी से सहायता करे, किसी को अपने अनुभवी अफसरों की सलाहों से नये कारखाने खोलने और उनको चलाने में सहायता दे, नई वस्तुओं के बनाने वालों को काम सिखलाने के

लिये औद्योगिक स्कूल खोले। नये कारखाने में काम आने वाली मशीने विदेश से मंगाने का प्रबंध करदे, और सलाना किराये पर देकर थोड़े से सालों में अपनी कीमत वसूल करले। किसी कारखाने में शुरू में यदि घाटा देख पड़ता हो तो सरकार दो एक साल तक उसका घाटा पूरा करदे जिसमें वह कारखाना चल निकले—चल निकलने पर फिर चाहे सरकार अपनी दी हुई रकम उस कारखाने से वसूल करले। इस प्रस्ताव के सबंध में वक्तृता देते हुवे भारतीय व्यवस्थापक सभा में श्रीमान् मालवीय जी ने कहा था कि "हमारे देश में कच्चा माल बहुत उत्पन्न होता है, हम इसे विदेश भेजते हैं। हमने अपनी कारीगरी में जैसी कि हमे चाहिये थी उन्नति नहीं की है। कौंसिल को याद होगा कि सन् १८७८ के फेमीन कमीशन ने यह लिखा था कि अकाल के समय की प्रजा की व्यथा को कम करने के लिये यह आवश्यक है कि देशी कारीगरी की उन्नति की जावे। सन् १९०८ में बोलते हुवे सरजान हिवेट ने कहा था कि यही एक ऐसा विषय है जिस पर सब से ज्यादा कहा गया है परन्तु सब से कम कार्य किया गया है। सिद्धांन्त के रूप में तो भारत सरकार ने भी इस बात को मान लिया है कि देशी कारीगरी की उन्नति करना उसका कर्तव्य है परन्तु कार्य रूपमें इस सम्बन्ध में बहुत कम किया गया है। इस लड़ाई ने इस कार्य की आवश्यकता महान बना दी है और यह भी दिखला दिया है कि यदि सरकार इस मौके को हाथ से न जाने दे तो निश्चय ही महा लाभ होगा। जहां तक मुझे मालूम हुआ है कि सरकार ने इस काम के लिए अभी तक कोई रकम नहीं दी है और न देश की कारीगरी को उत्तेजना देने

के लिए तत्परता के साथ कोई काम किया है। मेरी समझ में इस विषय में जापान हमारे लिए एक उत्तम पाठ सिखाता है। ४० वर्ष पहले जापान भारतवर्ष के समान कृषि प्रधान देश था, वहां की सारी उपज कच्चे माल के रूप में विदेश को भेजी जाया करती थी। ४० वर्ष के समय में ही जापान ने अपने को बदल लिया है। पहले यह कच्चा माल विदेश को भेजता था और (बना हुआ) तैयार माल विदेश से लेता था परन्तु अब वह पक्का माल विदेश को भेजता है। जापान से बाहर जाने वाले कच्चे माल की रकम प्रति वर्ष घटती रही और जापान से बाहर जाने वाले तैयार माल की रकम प्रति वर्ष बढ़ती रही और अभी बढ़ रही है। मेरा विचार है कि इस में किसी को भी संदेह न होगा कि भारत सरकार भी यदि वह चाहे तो भारतवर्ष की कारीगरी की उन्नति उसी प्रकार से कर सकती है जैसे कि जापान की सरकार ने जापान के कारीगरियों की उन्नति की है। मुझे आशा है कि इस कौंसिल में जो कुछ कहा गया है उससे सरकार अब भारतवर्ष में कारीगरी की उन्नति करने की आवश्यकता और उपयोगिता समझ जावेगी और इस के सम्बन्ध में सत्य प्रयत्न शुरू करेगी।"

इसी सम्बन्ध में माननीय मिस्टर क्लार्क (वाइसराय की कार्य कारिणी समितिके मेंबर) के इस मतका प्रतिवाद करते हुये कि 'जब तक इङ्गलैड हमारे लिये पक्का माल बना सकता है हम (भारतवर्ष) को स्वंय अपनी (भारतवर्ष की) सब जरूरतों के लिये पक्का माल यहीं बनाने के लिये प्रयत्न करने की कोई आवश्यक्ता नहीं।' श्रीमान् मालवीय जी ने

कहा था कि " इङ्गलैंड से भारतवर्ष का संबन्ध भारतवर्ष के लिये हितकर होनाचाहिये न कि अहितकर। कारीगरी में भी भारतवर्ष को इङ्गलैंड के सम्बन्ध के कारण हानि न होना चाहिये। अपने देश की सब जरूरतों को पूरा करने के लिये हम पक्का माल अपने देश ही में इसलिये बनाना चाहते हैं कि देश में पैदा होने वाली अथवा पाई जाने वाली सब चीजों का हम पूरी तौर से अच्छा उपयोग कर सकें। इङ्गलैंड यदि एक प्रकार का माल तैय्यार करता है तो वह करे। इङ्गलैंड के माल तैय्यार करने के कारण भारतवर्ष के लिये यह जरूरी नहीं है कि भारतवर्ष भी यदि उसे लाभ होता है तो उसी माल को न तैय्यार करे और देश से केवल कच्चा माल इङ्गलैंड भेजा करे। हम को अपनी इस औद्योगिक दशा से तब तक किसी प्रकार भी संतोष न करना चाहिये कि जब तक हम अपने देशवासियों की छोटी से छोटी जरूरतों को भी पूरी करने के लिये सारी चीजें या ऐसी चीजें कि जिनके बनाने के लिये हमारे देश में कच्चा माल मिल सकता है या जो हम सस्ती तैय्यार कर सकते हैं, अपने ही देश में न तैय्यार करने लगें। मुझे आशा है कि मेरे माननीय मित्र और भारत सरकार उन विचारों को कि जिनका मैंने हवाला दिया है अब छोड़ देंगे। और अब देश वासियों की आय बढ़ाने, उनकी दरिद्रता दूर करने, इन मंहगाई के दिनों में अच्छी तरह रहने के योग्य बनाने की आवश्यकता का विचार कर भारत सरकार इस भारी जरूरत को समझेगी और देशी कारीगरी की वृद्धि करने के लिये इस बज़ट में रकम अलग करेगी। "

सातवां अध्याय

कमीशनों में गवाही

प्रत्येक सभ्य देश में आज कल यह चाल है कि जब प्रजा में किसी राजनैतिक प्रश्न पर भारी आन्दोलन होता है, और सरकार यह जान जाती है कि प्रजा का चाहा हुवा सुधार करना आवश्यक है; तब वह सुधार का ब्यौरा निर्णय करने के लिये योग्य मनुष्यों की एक कमेटी या कमीशन नियत कर देती है। इस कमेटी या कमीशन में प्रजाके कुछ प्रतिनिधि और कुछ सरकारी मेंबर रहा करते हैं ये सब मेंबर देशभर में एक साथ दौरा करते हैं। और मुख्य २ स्थान में ठहर कर सरकारी अफसरों और देश में योग्य मनुष्यों तथा प्रजा की सभा सोसाइटियों के प्रतिनिधियों के विचार जानते हैं और प्रस्तावित सुधार के संबन्ध में उनकी सम्मति पूंछते हैं। इस प्रकार योग्य और अनुभवी मनुष्यों की सम्मति ले लेने के बाद सब मेंबर मिलकर एक रिपोर्ट लिखते हैं। इस रिपोर्ट में प्रस्तावित सुधार के संबन्ध में मेंबरों के विचार रहते हैं। कमेटी या कमीशन रिपोर्टके रूप में सरकार को अपनी सलाह देते हैं। सरकार कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार कार्य करे या न करे यह सरकार की इच्छा पर निर्भर रहता है। अधिकांश मेंबरों की सलाह से जो रिपोर्ट लिखी जाती है वही मुख्य रिपोर्ट समझी जाती है। जिन मेंबरों के विचार अधिकांश मेंबरों क विरोध से नहीं मिलते हैं वे अपने विचार

अलग लिखते हैं। और रिपोर्ट के साथ ही साथ परिशिष्ट भाग में छपते हैं। भारतवर्ष में दौरा करने वाले समय २ पर कई कमीशन नियत हुये हैं। इनमें से कुछ तो प्रजा के आन्दोलन पर प्रजा के चाहे हुये सुधारों की पूंछ ताछ करने के लिये इङ्गलैंड की सरकार या भारत सरकार द्वारा नियत किये गये थे। और कुछ भारत सरकार ने अपनी ही इच्छा से विविध प्रश्नों की जांच करने के लिये नियत किये थे।

भारतवासियों के हित की रिपोर्ट बहुत कम कमीशनों ने लिखी है। इस कारण भारतवासी कमीशनों से असंतुष्ट हैं।

सन् १९०७ में इंगलैंड से 'डिसेन्टे लिनेजेशन कमीशन नियुक्त हुवा। इस कमीशन को यह काम सौंपा गया कि वह "भारत वर्ष के अफसरों (वाइसराय, गवर्नर, लेफ़्टेंट गवर्नर, चीफ कमिश्नर, कमिश्नर, कलेक्टर) के अख्त्यारों की जांच करे और यह रिपोर्ट लिखे कि मातहत अफसरों को ऊपर के अफसरों से स्वतन्त्र करके या किसी दूसरी तरकीब से किस प्रकार भारतवर्ष की शासन प्रणाली सुधारी जासकती है" * इस कमीशन ने भारतवर्ष के मुख्य २ शहरों में दौरा किया। ता० १३ फरवरी सन् १९०८ में लखनऊ में श्रीमान मालवीय जी की गवाही इस कमीशन के सामने हुई।

श्रीमान मालवीय जी ने संयुक्त प्रान्त को गवर्नर सहित कौंसिल के शासन में रखने की सलाह दी। गवर्नर के विषय में आपने कहा कि गवर्नर इङ्गलैंड के राजनीतिज्ञों में से कोई नियत किया जाया करे। गवर्नर के साथ एक एग्ज़ीक्यूटिव

* सर जान स्टेची. जी. सी. यस. आई. 'इन्डिया एन्ड इट्स एडमिनिस्ट्रेशन पृ. १३१.

कौंसिल (कार्यकारिणी समिति) रहे। इस कौंसिल में ४ मेंबर रहें जिसमें से दो हिन्दुस्तानी हों। प्रत्येक ज़िले के लिये आपने कहा था कि कलेक्टर या डिप्टी कमिश्नरों को सलाह देने के लिये एक (एडमिनिस्ट्रेटिव डिसट्रिक्ट) ज़िला कौंसिल रहा करे। इसमें जिले के दो सरकारी अफ़सर और दो प्रतिष्ठित मनुष्य रहा करें। यह जिला कौंसिल कलेक्टर को जिले के इन्तजाम करने में सहायता दिया करे। "जिसका इंतजाम, सूखे के समय में सरकारी लगान छोड़ कर तकावी और सहायता बांटना, तालाब कुंवा बनवाना, जंगल का इंतजाम, हथियारों के लेसंस का प्रबंध, नशे के लेसंस का प्रबंध, इनकम टेक्स का प्रबंध, कोर्ट आफ़ वार्ड्स में इंतजाम लेने के लिये किसी रियासत की शिफारिस, मेले और त्योहारों में प्रबंध, झगड़े, संक्रामक रोगों का प्रबंध, प्रजा में शांति स्थापन का प्रबंध इत्यादि प्रश्न जिला कौंसिल के सामने पेश किये जाया करें।"

मालवीयजी ने यह भी कमीशन को सलाह दी थी कि प्रत्येक जिले में एक "डिस्ट्रिक्ट एडविजेरी कौंसिल" परामर्ष समिति रहा करे। जिसमें ज़िले की म्युनिसिपेलटी और डिस्ट्रिक बोर्डों के मेंबर सभासद् रहा करें। यह कौंसिल ६ महीने में कमसे कम एक बार एकत्रित हुवा करे और ऐसे प्रश्नों पर यह कौंसिल विचार किया करे कि जिन्हें जिले के म्युनिसिपल बोर्ड, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड या जिले की 'एडमिनिस्ट्रेटिव कौंसिल' इसके पास भेजा करें। "इस प्रकार प्रजा के विचार कलेक्टर के जरिये से सरकार को मालूम होजाया करेंगे और सरकार के विचार प्रजा

को मालूम हो जाया करेंगे।"*

गावों के लिए आपने कहा था कि "गावों को पुलिस, सफाई और शिक्षा, सम्बन्धी प्रवन्ध करने और छोटे २ फौजदारी या दीवानी के मुकदमें निपटाने का अधिकार देना चाहिये। यह हम सहज में कर भी सकते हैं। प्रत्येक गांव में या दो चार गांव में मिला कर पंचायतें स्थापित की जाँय। पंच गांव की जनता द्वारा चुने जावें। और इन पंचायतों पर अफसरों का दबाव न रहा करे। यदि पंचायतों को पूरी स्वाधीनता रहेगी तो वे भली प्रकार काम कर सकेंगी। यदि इस प्रकार की पंचायतें गांवों में स्थापित की जावें तो मेरी राय में इनसे गांव वालों की दशा बहुत कुछ सुधर जावेगी और उनका जीवन बहुत कुछ सुखमय बन जावेगा। गांवों की दशा सुधारने के लिए गांवों में पंचायतें स्थापन करने से और दूसरी कोई अच्छी तरकीब मेरी समझ में नहीं है। उनका संगठन इस प्रकार का हो कि गांव वालों को वह अच्छा लगे। उन्हें कुछ अधिकार और जिम्मेदारियां भी दी जावें। जिले की 'एडमिनिसट्रेटिव कौंसिल' उनकी देख देख करें और उन्हें सलाह दिया करें।†

इस कमीशन की रिपोर्ट सन् १६०६ में निकली। कमीशन ने १३४ शिफारिशें भारतीय शासन प्रणाली के सुधार के लिए कीं। उनकी यह शिफारिश कि मद्रास और बम्बई में गवर्नर की एगजीक्यूटिव कौंसिलों में भारतवासी हों भारत सरकार

* रायल कमीशन अपान डिसेंट्रिलिजेशन की रिपोर्ट यू·पी० एवीडेंस

†ऊपर की रिपोर्ट : पृ० ७१

ने सन १९०९ के सुधार में मान ली और अब बम्बई, मद्रास, बङ्गाल और विहार में एगज़ीक्यूटिव कौंसिलों में एक २ भारतवासी मेम्बर भी हैं। 'संयुक्त प्रांत के लिए एगजीक्यूटिव (कार्यकारिणी समिति) कौंसिल देने का वादा किया गया है।" *म्युनिसिपेलिटियों में सभापति अब शहर के प्रतिष्ठित सज्जन होते हैं। और गांवों में छोटे २ मुन्सिफ भी नियुक्त किये गये हैं। आशा है कि पंचायतें भी शीघ्र ही स्थापित हो जावेंगी।

भारतवर्ष में कई वर्षों से सरकारी नौकरियों में भारतवासियों को ऊँचे ओहदे न मिलने के कारण भारी आंदोलन हो रहा था। भारतवासियों को सरकारी ऊँचे ओहदे न मिलने का मुख्य कारण यह था—और दुख है कि अब भी है— कि मुख्य सरकारी ऊंचे ओहदे सब ' इन्डियन सिविल सर्विस ' पास किये हुए मनुष्यों को मिला करते हैं। ' इन्डियन सिविल सर्विस ' का इमतिहान इङ्गलैंड में होता है, कि जिसके कारण भारतवासी युवक इमतिहान में बैठ नहीं पाते। भारतीय युवकों के लिए छोटी उमर में इस देश में जाकर पढ़ना और १९ वर्ष की उमर में इमतिहान पास करना बहुत कठिन है।

आन्दोलन को शांत करने के विचार से इङ्गलैंड से 'पबलिक सरविसेज कमीशन' सन १९१२ में नियुक्त हुआ। इस कमीशन में कुल १२ मेम्बर थे। जिसमें से तीन भारतवासी थे—स्वर्गवासी मिस्टर गोखले, मिस्टर अबुरहीम, और मिस्टर चौबल। भारतवर्ष और इङ्गलैंड में यह कमीशन घूमा। और दोनों

* इलबर्ट्स ' गवर्नमेंट आफ इंडिया पृ० १४२

देशों में रहने वाले सरकारी और गैर सरकारी महानुभावों की इस कमीशन के सामने गवाहियां हुईं। ३१ मार्च सन १९१३ को श्रीमान मालवीय जी की गवाही इस कमीशन के सामने हुई। आपने 'इन्डियन सिविल सर्विस' के इमतिहान के भारतवर्ष में भी होने की आवश्यकता, भारत वासियों के लिए कोई संख्या नियत रखने की अनावश्यकता, शासन विभाग और न्याय बिभाग के लिए अलग २ इमतिहान की जरूरत, 'इन्डियन सिविल सर्विस' का इमतिहान देनेवाले विद्यार्थियों के लिए डिग्री की जरूरत, और केवल इमतिहान द्वारा इंडियन सिविल सर्विस में भरती होने की उपयोगिता बड़ी ही दृढ़ता और प्रमाण के साथ बतलाई।

सन् १८८६ वाले कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में लिखा था कि " भारतवर्ष के वर्तमान सामाजिक जीवन के विचार से इङ्गलैंड और हिन्दुस्तान दोनों देशों में एक ही समय में 'इन्डियन सिविल सर्विस' का इमतिहान लेना उचित न होगा; क्योंकि एक तो हिन्दुस्तान के स्कूल और कालेजों में इङ्गलैंड के समान शासन विभाग के योग्य बनाने वाली उच्च और उदार शिक्षा नहीं मिलती दूसरे भारतवर्ष में तो इमतिहान शुरू कर देने से यहां की कुछ मुख्य जातियों को उन्नति कर लेने का मौका मिल जावेगा और अन्य जातियां पीछे रह जावेंगी।" श्रीमान मालवीय जी ने कमीशन के इन विचारों का खंडन करते हुए कहा था :—

"पहले इस आक्षेप के विषय में कि भारतवर्ष के सामाजिक जीवन के कारण भारत वर्ष में इमतिहान देने वालों में इङ्गलैंड वालों के समान शासन की योग्यता न होगी,-मुझे यह कहना

है कि इङ्गलैंड के सामाजिक जीवन का महत्व जरूरत से ज्यादा मान लिया जाया करता है, और वैसी ही भारतीय दशाओं का कम मान लिया जाता है।"

"मेरे विचार से इंडियन सिविल सर्विस के कई योरोपियन सज्जनों में भी शासन की आवश्यकीय योग्यता नहीं है। परन्तु कई भारत वासियों में जो कि भारतवर्ष से बाहर कभी नहीं गये शासन विभाग के उच्च पदों पर रहने की योग्यता है। यह योग्य भारत वासी देशी रियासतों में तो ऊंचे पदों पर नियुक्त हैं ही, परन्तु बृटिश हिन्दुस्तान में भी ऐसे योग्य कई भारत वासी मौजूद है।

"इसमें सन्देह नहीं कि प्रत्येक देश में युवक के चरित्र-गठन में देश के तत्कालीन सामाजिक जीवन का कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य ही पड़ता है। परन्तु युवक को जो शिक्षा मिलती है, जिस संगति में वह रखा जाता है, जिन विशेष दशाओं मैं उसका लालन पालन हुआ है, और जिस विभाग में वह नौकर होता है उस विभाग की रीति रस्म चाल ढाल इत्यादि का उसके भावी चरित्र पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। इसे कोई नहीं अस्वीकार करता कि पिछले ५० वर्षों में भारतवासियों को जो शिक्षा मिली और जो अवसर मिले उनसे उनके चरित्र और उनकी योग्यता में बहुत बड़ी उन्नति हुई है।

"यदि आप साधारण शिक्षा वाले मनुष्यों को ऐसी जगहों पर नियुक्त करेंगे कि जहाँ पर उन्हें लालच में पड़ जाने के मौके हैं, तो इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं कि उनमें से बहुत से चाहे वे अङ्गरेज हों या हिन्दुस्तानी लालच में पड़ जाँयगे।

स्कूल का एक २ लड़का इस बात को जानता होगा कि क्लाइव के पहले ईस्ट इंडिया कंपनी के नौकरों के कैसे चरित्र थे। उसे यह भी पता होगा कि लार्ड कार्नवालिस के पहले तक जब तक कि अफसरों की तनख्वाहें कम थीं अफसर क्या २ किया करते थे। सर जार्ज मेलनी ने लिखा है कि लार्ड कार्नविलास ने अफसरों की तनख्वाहें बढ़ा कर बड़ी राजनीतज्ञता और दूरदर्शिता का काम किया, क्योंकि इससे भारतवर्ष के अंगरेजी नौकरों का चरित्र सुधर गया, और उनमें योग्यता और पवित्रता का संचार होगया। मेजनी ने आगे लिखा है कि यदि कहीं हिन्दुस्तान के अङ्गरेजी नौकरों कि तनख्वाहें फिर घटा दी जावें तो उनकी योग्यता और पवित्रता फिर चल बसे।"

"इंडियन सिविल सर्विस के नौकरों में जो योग्यता पाई जाती है वह मेरी समझ में इङ्गलैंड के सामाजिक जीवन के कारण नहीं है बरन उनकी बड़ी २ तनख्वाहों के कारण है। जिन लोगों में रंग और जाति के पक्षपात भरे हैं शायद उनकी समझ में यह बात न आवे परन्तु पक्षपात रहित सब लोग इस बात को मान लेंगे।"

श्रीमान् मालवीय जी ने कहा था कि इन्डियन सिविल सर्विस का इमतिहान इङ्गलैंड और हिन्दुस्तान दोनों में होवे और दोनों देशों के इमतिहान में जितने लोग शामिल हों उनमें से उत्तम पास होने वाले आवश्यकता के अनुसार युवक ले लिये जाया करें इस बातका कोई ख्याल न किया जाया करे कि कौन अङ्गरेज है और कौन हिन्दुस्तानी। इसके विरुद्ध कई लोगों ने यह कहा था कि ऐसा करने से इन्डियन सिविल

सर्विस में सब हिन्दुस्तानी ही भर जावेंगे। इस नीच आक्षेप के उत्तर में श्रीमान् मालवीय जी ने कहा था कि "इस आक्षेप का मतलब यह है दिमागी टक्कर में कठिनाई के साथ विद्याभ्यास करने वाले हिन्दुस्तानी नवयुवक इङ्गलैंड की उच्च और उदार शिक्षा पाये हुये अङ्गरेज़ों को पछाड़ देंगे। देश प्रेम से रंगी हुई मेरी आत्मा को तो इस विचार से यदि मैं इस पर विश्वास कर सकूं तो बड़ा सुख होगा। परन्तु मेरे भाई अङ्गरेज़ों की मस्तिष्क शक्ति का ऐसा कम अन्दाज नहीं कर सकता।" आपने कहा कि अङ्गरेज़ बराबर भरती होते रहेंगे और यदि ऐसा कभी होभी तो बहुत वर्षों बाद शायद ऐसा हो सके कि हिन्दुस्तानियों की संख्या इन्डियन सिवल सर्विस में बढ़ जाय। "परन्तु यहाँ यदि यह हम मान ले कि इन्डियन सिबिल सर्विस में हिन्दुस्तानियों की संख्या अङ्गरेजों से अधिक हो जावेगी तो यह कोई ऐसी बात नहीं है कि जिसके लिये बृटिश सरकार को चिन्ता करना उचित हो। हम भारतवासी भारत वर्ष में इङ्गलैंड के आधिपत्य का यही उद्देश मानते हैं।"

कई अङ्गरेज यह कहा करते हैं कि भारत वासियों में शासन की उच्च योग्यता नहीं पाई जाती है इसके उत्तर में श्रीमान् मालवीय जी ने कमीशन से कहा था कि "वे अंगरेज जो यह कहा करते हैं कि भारतवासियों में शासन की उच्च योग्यगा नहीं होती शायद इस बात को भुला देते हैं कि हिन्दू और मुसलमानों का शताब्दियों का पिछला इतिहास इन्हीं योग्यताओं के गौरव से भरा हुआ है। यद्यपि समय के चक्र ने उन्हें आज नीचा दिखला दिया है—जैसे कि उनके भाई

ग्रीस और रोम वालों को परन्तु एक समय ऐसा था कि जब वे भी लम्बी चौड़ी साम्राज्यों का सुप्रबन्ध और सुशासन करते थे। अंगरेजी राज्य को इस देश में स्थापित हुये केवल १५० वर्ष ही बीते हैं। जातियों के इतिहास में १५० वर्ष का काल एक बहुत छोटा स्थान पा सकता है। अङ्गरेजों के पहले हिन्दू और मुसलमान इस बड़े देश का प्रबन्ध करते ही थे। नैपाल और देशी रियासतों में प्रबन्ध करने वाले आज भी वे ही हैं। बृटिश सरकार ने भी जिन भारतवासियों को ऊंचे ओहदों पर नियुक्त किया उन्होंने अपना कार्य सफलता और संतोष जनक रीतिसे पूरा किया है। हमारे योरोपियन भाइयों को इस बात को मान लेना चाहिये—मुझे सुख है कि बहुत से इस बात को मानते भी हैं—कि यदि भारतवासियों ने किसी प्रकार की योग्यता या शक्ति की पूरी उन्नति नहीँ की है तो इसका एक मात्र कारण यह है कि उनको ऐसे उन्नति करने या ऐसी शक्ति प्राप्त करने का अवसर ही नहीँ मिल सका है।"

कमीशन के सामने गवाही देते हुये श्रीमान् मालवीय जी से जो प्रश्न किये गये थे उनमें से कुछ यहां पर हम श्रीमान् मालवीय जी के दिये हुये उत्तर के सहित उद्धृत करते हैं।

प्रश्न नं० ४३२१६-मेरा अनुमान है कि आपके इन प्रस्तावों का यह फल होगा कि हिन्दुस्तानी नौकरियों में यूरोपियनों की संख्या बहुत थाड़े समय में बहुत कम रह जावेगी। क्या यही आप का उद्देश है ?—"उद्देश यह कि सरकारी नौकरियों में बराबरी के इमतिहान से जितने ज्यादा से ज्यादा भारत-वासी पहुंच सकें पहुंचे।

४३२६२. जितनी बातें आपने बतलाई हैं उन सब का स्पष्टता, अंगरेजों के भरती होने में असर पड़ेगा ?—"यदि यह हो तो मुझे इस फल के लिये दुखित होना न चाहियें। मैं भारतवासियों की बड़ी संख्या इंडियन सिविल सरविस में चाहता हूं। उद्देश यह नहीं है कि अंगरेजों की संख्या घट जावे, बस उद्देश यह है कि हिन्दुस्तानियों की संख्या बढ़ जावे।"

४३२६३. आप हिन्दुस्तानी विषयों में एक खास इमतिहान चाहते हैं, इङ्गलैंड और हिन्दुस्तान दोनों देशों में इमतिहान चाहते हैं, और यह चाहते हैं कि इंडियन सिविल सर्विस की तनख्वाह घटा दी जावें। इन सब बातों से स्पष्टतया अङ्गरेजों के इमतिहान में शामिल होने में असर पड़ेगा ?— "मैं ऐसा नहीं विचारता मेरी समझ में हिन्दुस्तान और इङ्गलैंड की दशा में, हिन्दुस्तान और इङ्गलैंड के सम्बन्ध में एक देश से दूसरे देश में आने जाने की सुविधाओं में ऐसा परिवर्तन, हो रहा है, कि मेरे प्रस्ताव मान लेने पर भी इङ्गलैंड के योग्य नवयुवक अच्छी संख्या में इंडियन सिविल सर्विस की परीक्षा में शामिल हो सकेंगे।"

४३२६४. आप का यह विचार है कि आपके प्रस्तावों से लोग आकर्षित होंगे ?—जी हां।

४३२६५, क्या आप यह चाहते है कि वे लोग आकर्षित हों ? निश्चय ही यह मैं चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि इङ्गलैंड के योग्य युवक इंडियन सिविल सर्विस में भरती हों।
४३२६६ आप चाहते हैं ? जी हाँ।

४३२६७. परन्तु यदि हिन्दुस्तानी युवक इमतिहान में

अंग्रेज युवकों से अच्छे पास हों तो आप अङ्गरेज युवकों को नहीं चाहते?—मैं आशा करता हूं कि धीरे २ हम लोग इमतिहान में आगे पास हुआ करेंगे, और तब हम उन जगहों पर पहुंच जावेंगे कि जिनपर आज हमारे अङ्गरेज भाई हैं।

४३२९८ क्या आप कोई भी ओहदे ऐसे नहीं रखना चाहते कि जिसमें सिर्फ अङ्गरेज ही नौकर हो सकें? क्यावाइसराय की भी जगह नहीं?—नहीं इस तरह कोई भी नहीं।

कमीशन के इस प्रश्न के उत्तर में कि "क्या आप यह ठीक समझते हैं कि इडियन सिविल सर्विस की नौकरियों में सब जाति के मनुष्यों का भरती होना आवश्यक है श्रीमान् मालवीय जी ने कहा था कि "सब जातियों को यह अधिकार है कि वे शिक्षा पाने और बराबरी के इमतिहान में शामिल होने के लिये अन्य जातियों के बराबर ही मौका मांगे, परन्तु जब तक कि वे उन नौकरियों और ओहदों की योग्यता बराबर के इमतिहान में पास होकर न प्राप्त करलें तब तक उन जातियों का यह दावा कि उनके युवकों को भी नौकरियों में स्थान दिया जावे ठीक नहीं है। सरकारी नौकरों की नियुक्ति किसी जाति विशेष की सेवा करने के लिये नहीं हुवा करती है, वरन् उनका कर्तव्य यह होता है कि वे समस्त जनता को एक मय जान कर उस जनता की सेवा करें। इस लिये लोकहित तो यही मांगता है कि उत्तर दायत्वपूर्ण और विश्वसनीय ओहदों पर केवल वे ही नियुक्त किये जाया करें कि जिनमें उस ओहदे कार्य को संचालन करने की शक्ति और योग्यता हो।"*

* पबलिक सरविसेज कमीशनकी रिपोर्ट; (एविडेंस, संयुक्त प्रांत)

पवलिक सरविसेज़ कमीशन ने सन् १९१२ से १९१६ तक हिन्दुस्तान और इंगलैंड की सैर करने के वाद जनवरी सन् १९१७ में अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की है। इतनी मेहनत और इतने खर्च के बाद कमीशन ने जो शिफारिशें की हैं वे भारतवासियों के लिये हितकर नहीं हैं। कमीशन ने भारतवर्ष में इन्डियन सिविल सर्विस इमतिहान होने की शिफारिश नहीं की, विलायत में जो इमतिहान होते है उसमें शरीक होने वालों की उमर की कैद २२ वर्ष से १९ वर्ष की करदी है। ऐसी अहितकर रिपोर्ट देख कर भारतवर्ष में एक ओर से दूसरे छोर तक प्रजा में घोर असंतोष फैल गया था। आंदोलन के कारण सरकार ने उक्त कमीशन की शिफारशों के अनुसार कोई भी नया काम नहीं किया है। और आशा है कि न करेगी। भारत सचिव मिस्टर मांटेगू की कृपासे जो सुधार भारतवर्ष में होने वाले हैं उनमें आशा की जाती है कि सरकारी नौकरियों के संबध में भारतवासियों की जो शिकायतें हैं वे सब मिट जावेंगीं।

मई सन् १९१६ में भारत सरकार ने एक 'औद्योगिक कमीशन' नियत किया है और इस कमीशन को यह काम सौंपा गया है कि वह इस विषय पर जांच करे कि हिन्दुस्तान में औद्योगिक उन्नति किस प्रकार की जा सकती है। इस कमीशन में सर. टी. हालेंड सभापति और मेंवर हैं:— मिस्टर चैटर टन, सर फजूलभाई करीम भाई इब्राहीम, मिस्टर इ. हापकिनसन, मिस्टर सी० ई० लो; माननीय पंडित मदन मोहन मालवीय, सर·आर·एन मुकर्जी; दी० राइट होनेरेवल सर होरेस मुन्कट; मिस्टर एफ० एच स्टिवंट

और सर दोराब ताता।

इस कमीशन ने अक्टोबर सन् १९१६ से दौरा आरंभ कर दिया था। हिन्दुस्तान में घूम कर योग्य महानुभावों की सम्मति लेकर शीघ्र ही यह कमीशन अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करेगा। कमीशन में योग्य हिन्दुस्तानी मेंबरों की उपस्थिति के कारण यह आशा की जाती है कि इस कमीशन की रिपोर्ट भारतवर्ष के लिये अच्छी होगी और सरकार की वर्तमान नीति से यह आशा करना कि सरकार उस शिफारिश को मान लेगी कुछ बहुत नहीं है।

अठवाँ अध्याय

हिन्दू विश्व-विद्यालय

भारतवर्ष में एक समय घर २ विद्या पढ़ी और पढ़ाई जाती थी। नलन्द, नदिया और तक्षशिला विश्वविद्यालयों में दूर दूर देश से आये हुये विद्यार्थी सहस्रों की संख्या में रहते और वेद, दर्शन, शास्त्र, विज्ञान, साहित्य इत्यादि पढ़ते थे। काशी प्रयाग और नैमिशारण में एकत्रित होकर सहस्रों ऋषि गण धर्म चर्चा किया करते थे। उसी विद्या प्रचार का फल था कि भारतवर्ष में एतिहासिक काल से पूर्व में श्री राजा रामचन्द्र से प्रजावत्सल राजा, कृष्ण से योगी, अर्जुन से वली, भीष्मसे द्रढ़ प्रतिज्ञ; और एतिहासिक काल में महाराज बुद्ध से सुधारक, अशोक, चन्द्रगुप्त, हर्ष से चक्रवर्ती सम्राट, चाणक्य, और शुक्र से राज्यनीतिज्ञ कालिदास, और वाण से कवि नाट्यकार, पतंजलि से दार्शनिक, पाणिनी से वैयाकरण, लीलावती से गणितज्ञ, शङ्कराचार्य से विद्वान हो गये। भारतवर्ष ही संसार में वह देश है कि जहां के चक्रवर्ती सम्राट अशोक ने संसार में पहले पहल ईसा काल से २५० वर्ष पूर्व सुदूर देश मिश्र यूनान (ग्रीस) आसाम चीन और जापान तक शांति के साथ धर्म प्रचार के लिये विद्वान् भेजे थे। भारतवर्ष अपनी विद्या और अपने धन के लिये संसार में श्रेष्ट माना जाता था। संसार के अन्य देश

भारतवर्ष से व्यापार करने में अपना गौरव समझते थे। ईसा काल से ३००० वर्ष * पहले तक के इतिहास में पता लगता है कि भारतवर्ष के व्यापारी मिश्र व फारस से व्यापार करते थे। इस समृद्धिशाली समय के बाद भारतवर्ष में एक ऐसा समय आया कि देश में अविद्या फैलती गई, ऐक्यता और प्रेम के स्थान में द्रोह और दंभ का संचार हुआ, देश की शक्ति नष्ट हुई, राष्ट्रीयता का संगठन, स्वाभिमान और साहस भ्रष्ट होने पर स्वार्थता और भीतता ने अपना साम्राज्य स्थिर किया। आपस के द्रोह के कारण विदेशियों को देश में आकर साम्राज्य स्थिर करने का अवसर मिल गया। कुछ अदूरदर्शी भारतवासियों ने अपने भाई ही को नीचा दिखलाने का नीच सुखभोग करने की इच्छा से विदेशियों का आधिपत्य स्वीकार कर, सदैव के लिये स्वतंत्रता देवी के हाथ जोड़ आत्मीयता धर्म, ऐश्वर्य और जातीय गौरव से विमुख हो गये। सामाजिक जीवन का ह्रास हुआ, भारतीय रणस्थल में हिन्दू और मुस्लिम सभ्यताओं के दाव पेच होने लगे। संस्कृत के स्थान में लोगों ने अरबी और फ़ारसी पढ़ना शुरू की। हिन्दुओं ही की सुविधा के लिये हिन्दू धार्मिक ग्रंथों के उर्दू और फ़ारसी में अनुवाद किये गये। विदेशी भाषा और विदेशी चाल ढाल राज्य सम्मान पाने की इच्छा करने वाले धनी मानी सज्जनों ने स्वीकार की।

कुछ शताब्दियों की क्रांति और अराजकता के बाद

---

* माननीय सर दिनशा एदलजी वाचा की ता: २७ जनवरी सन् १९७५ में बम्बई में दी हुई वक्तृता से। लेखक

मुग़ल वंश के संस्थापन काल से फिर भारतवर्ष में ऐसा राज्य आरम्भ हुआ कि जिसे हम सुशासन कह सकते हैं। हिन्दू और मुसलमान एक होकर रहने लगे। मुसलमान भारतवर्ष को ही अपना देश मानने लगे। मुसलमानों ने हिन्दू सभ्यता से बहुत कुछ सीखा। मुसलमान राजाओं ने हिन्दुओं को बंगाल, गुजरात, मालवा इत्यादि बड़े २ सूबों का सूबेदार बनाया, सेनाओं का फौजदार बनाया और प्रधान मंत्री नियुक्त किया।

मुग़लवंश के औरङ्गजेब से अदूरदर्शी सम्राट ने अपने कुत्सित व्यवहार से शक्तिशाली हिन्दू जाति को त्रास दिया। जिसका फल यह हुआ कि महाराष्ट्र में छत्रपति शिवाजी पजांब में बीर गुरुगोविन्द सिंहजी और बुंदेलखंड में बीरछत्रसालदेव ने हिन्दू जाति की रक्षा करने के लिये हाथ में तलवार ली। और बीर हिन्दूजातिने इन वीरों को तन मन धन से अपनाया और इनके झंडे की रक्षा में आया एक वार फिर भारतवर्ष मे हिन्दू साम्राज्य स्थापित करने का विचार किया और बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त की। परन्तु जब तक देश के बच्चे से बूढ़े तक के हृदय में स्वदेश प्रेम और आत्मत्याग का रोष न हो जाति का पुनरोत्थान कठिन ही नहीं असंभव है।

इस समय तक (अठारवी शताब्दीके अन्त में) ईस्ट इंडिया कम्पनी बंगाल और मद्रास पर अपनी हुकूमत जमा चुकी थी। धीरे २ ईस्ट इंडिया कम्पनी का आधिपत्य भारतवर्ष में फैलता गया। ईस्टइडिया कम्पनी के अधिपत्य से देश में शांति स्थापित हुई। छोटे २ राजाओं में आपस की लड़ाइयां बन्द हुई और देश में शांति और सुख का संचार होगया।

बृटिश राज्य काल में अंग्रेजी शिक्षा का आरम्भ हुवा। कई स्कूल और कालेज खोले गये। प्राथमिक शिक्षा का प्रचार किया गया। देश में रेलतार और डाकखानों के द्वारा एक शहर के मनुष्यों का दूसरे शहर के मनुष्यों के साथ सम्बन्ध बढ़ने लगा। यद्यपि विद्या प्रचार में जैसी चाहिये थी, या जैसी अन्य देशों में उन्नति हुई है भारत वर्ष में नहीं हुई, परन्तु तब भी यह कहना पड़ेगा कि १०० या ५० वर्ष पहले जितने पढ़े लिखे मनुष्य हमारे देश में थे उससे आजकल कहीं अधिक पढ़े लिखे मनुष्य हैं।

सरकार द्वारा विद्या का प्रचार हमारे देश में जरूर हुवा, परन्तु सरकार की विद्या प्रणाली में कई बड़े २ दोष हैं। मुख्य तो यह कि अभी तक स्कूलों में जो पढ़ाई होती रही है उस में धार्मिक शिक्षा को कोई भी स्थान नहीँ दिया गया। मनुष्य के जीवन में साधारण जीवन से धार्मिक जीवन को हम अलग नहीं कर सकते हैं। हमारे धार्मिक विचार और हमारे धार्मिक सिद्धान्तों ही पर हमारे छोटे और बड़े सब काम निर्भर रहते हैं। धार्मिक शिक्षा के बिना हमारे बालक अपने जीवन का पवित्र उद्देश, मातृ भूमि के प्रति, दृढ़ प्रेम और जाति, समाज व देश के प्रति अपने कर्तव्य को समझने के अयोग्य रखे गये। धार्मिक शिक्षा शून्य प्रणाली ने हमारे हृदयों को देशानुराग से शून्य कर दिया और हमें कायर और भीरु बना दिया। धर्म की शिक्षा हमें न मिलने के कारण हम अपने पर विश्वास न कर सके। धार्मिक शिक्षा विना जीवन हमारे लिये कोई पवित्र कर्त्तव्य न रह गया, वरन् एक अनिवार्य कार्य बन गया। हमें अपने देश की सभ्यता में श्रद्धा

न रह गई, हमारा इतिहास गौरव पूर्ण होने पर भी हमें वह निरस ज्ञान पड़ने लगा। विदेशी चमक दमक की चका चौंध में आ हम अपने देश के कला कौशल, को असामयिक और असंगत कह उससे मुख मोड़ने लगे। रसहीन शिक्षा मिलने के कारण हमें हमारा समाज असभ्य, हमारी चाल ढाल असामयिक हमारी पोशाक अप्राकृतिक और हमारी सीधी सुखमय रहन सहन नीची कक्षा की रहन सहन, देख पड़ने लगी। धार्मिक शिक्षा को हमारी शिक्षा प्रणाली में स्थान न मिलने के कारण हमारे चरित्र का दृढ़ संगठन न हो सका; हमें हमारे जीवन में गौरव और उच्च आदर्श न जान पड़ा, देश जाति और बन्धु बांधव के प्रति हम अपना कर्त्तव्य समझ सकें।

दूसरा दोष इस शिक्षा प्रणाली में यह है कि जातीयता इस शिक्षा प्रणाली में है ही नहीं। स्कूल और कालेजों में बालकों को ऐसी शिक्षा नहीं दी जाती कि वे अपने देश को समझ सकें जाति और देशसे प्रेम कर सकें। जातीय जीवन के संचार को रोकने का भरसक प्रयत्न किया जाता है। बालक स्कूल और कालेजोंके 'दि बोटिंग एसोसियेशन' या 'लिटररी सोसाइटी' में "राजनैतिक विषय" के भूत से डरवा कर अपने विचारों को भी प्रगट करने से रोके जाते हैं। हम यदि अपने राष्ट्रीय नेताओंका सम्मान करते हैं तो हमारे मार्गमें बाधाएं उपस्थित की जाती हैं। मातृभूमि का गौरवपूर्ण इतिहास हमें न सिखला कर रोम और ग्रीस की दन्त कथाएं हमें पढ़ाई जाती हैं। विद्यार्थी जीवन हमारे जीवन में सर्वोत्तम समझा जाता है परन्तु वह भी इस देश में अंगरेजी स्कूल और कालेजों में

इतना रूखा है कि विद्यार्थी बनने का जो आनन्द है हमारे बालकों को नहीं मिलता।

तीसरा दोष इस शिक्षा प्रणाली में यह है कि वर्तमान स्कूल और कालेजों में शिक्षक और विद्यार्थी यदि कोई अपना उद्देश्य समझते हैं तो केवल एक यह कि परीक्षा में विद्यार्थी पास हो जांय। हमें किसी प्रकार की शारीरिक शिक्षा नहीं दी जाती है।

ऐसी दशा में हिन्दू विचार और हिन्दू सभ्यता की रक्षा करने के लिए, हिन्दू बालकों को हिन्दू धर्म्म के अनुसा शिक्षा देने के लिए, और देश में कृषि, कारीगरी, और व्यापार की वृद्धि करने के लिए यह आवश्यक था कि भारतवर्ष में एक जातीय विश्वविद्यालय स्थापित किया जावे।

श्रीमान् पंडित मदन मोहन मालवीय जी ने हिन्दू सभ्यता और हिन्दू जाति के प्राचीन गौरव वर्तमान अवनति व भावी उत्थान की आवश्यकता को अपने विद्यार्थी जीवन ही में समझ लिया था। तब ही से आपने यह निश्चय कर लिया था कि इस वीर प्राचीन सभ्यता वाली हिन्दू जाति का उत्थान केवल एक हिन्दू विश्वविद्यालय से ही हो सकता है। उपयुक्त अवसर मिलने पर श्रीमान मालवीय जी ने हिन्दू विश्व विद्यालय के प्रस्ताव को अन्य भारतीय नेताओं के सन्मुख रक्खा। पहले पहल सब को इस बात में संदेह था कि हिन्दूजाति हिन्दू विश्वविद्यालय संस्थापित कर सकेगी—जैसा कि हिज हाइनेस महाराजा प्रभूनारायणसिंह जी० सी० आई० ई० काशी नरेशने सेंट्रल हिन्दू कालेज में वक्तता देते हुवे कहा था कि " जब हमारे माननीय मित्र पंडित

मदनमोहन जी मालवीय ने—कि जिनसे ही इस पवित्र काय का सूत्र पात हुवा है मुझसे पहले पहल हिन्दू विश्वविद्यालय के स्थापति करने के विचार को कहा मुझे इस कार्य की सफलता में संदेह था ।”

श्रीमान् मालवीय जी भारतीय नेता, राजा, महाराजा और देशी व विदेशी विद्वानों से अपने इस प्रस्ताव के संबंध में राय लेते रहे, हिन्दू विश्वविद्यालय की आवश्यकता समझाते रहे। किसी ने श्रीमान् मालवीय जी के प्रस्ताव से सहानुभूति प्रगट की और किसी ने उसकी सफलता में निराशा दिखलाई, परन्तु श्रीमान् मालवीय जी अपने उत्साह और अपने पर विश्वास के कारण अपने निश्चय किये हुवे उद्देश पर अटल रहे। अविश्रांति परिश्रम से थोड़े ही दिनों में वह समय आगया कि सब हिन्दू विश्वविद्यालय की आवश्यकता को समझने लगे। सन् १९०४ में पहले पहल काशी में काशीनरेश की अध्यक्षता में एक सभा हुई और इसमें श्रीमान् मालवीय जी ने हिन्दू विश्वविद्यालय का ब्योरेवार प्रस्ताव सभा के सन्मुख विचार करने के लिये उपस्थित किया। सभा ने श्रीमान् मालवीय जी के प्रस्ताव की आवश्यकता समझी और मालवीय जी के प्रस्ताव से अपनी सहानुभूति प्रगट की सभा की ऐसी संतोष जनक कार्यवाही से उत्साहित हो श्रीमान् मालवीय जी ने अक्टूबर सन् १९०५ में प्रस्तावित हिन्दू विश्वविद्यालय का एक प्रासपेक्टस छपाकर समस्त भारतवर्ष के हिन्दू नेताओं विद्वानों, राजा और महाराजाओं के पास विचार के लिये भेजा। और सन् १९०५ में ३१ दिसम्बर को कांग्रेस के समय काशी के टाउन हाल में एक बड़ी सभा

इस हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रस्ताव पर विचार करने के लिये की गई। इस सभा में सब प्रांत के हिन्दुओं के प्रतिनिधि और सब धर्मों के अनुयायी एकत्रित थे। फिर सन् १९०६ में प्रयाग में होने वाली सनातन धर्म महासभा में यह प्रस्ताव विचार के लिये श्रीमान् मालवीय जी ने उपस्थित किया इस सभा में उपस्थित हिन्दुओं ने भी श्रीमान् मालवीय जी के प्रस्ताव से पूर्ण सहानुभूति प्रगट की।

जनता और समाचारपत्रों ने भी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रस्ताव के लिये अपना उत्साह दिखलाया और उसकी सहायता करने की इच्छा प्रगट की। परन्तु कई कारणों से कि जिनका यहां उल्लेख करना उपयुक्त नहीं है हिन्दू विश्व-विद्यालय के प्रस्ताव के लिये संगठित रीति से इस समय कार्य नहीं आरम्भ किया जा सका।

"जब श्रीमान् मालवीय जी अपने प्रस्तावित हिन्दू विश्व-विद्यालय के लिये सहानुभूति और सहायता एकत्रित करने में व्यग्र थे, श्रीमती एनी बेसेंट ने सेन्ट्रल हिन्दू कालेज को बढ़ाकर बनारस में "यूनीवर्सिटी आफ इंडिया "स्थापित करने का प्रस्ताव प्रकाशित किया। और सन् १९०७ ई० श्रीमती एनी बेसेंट ने 'यूनीवर्सिटी 'आफ इंडिया।' स्थापित करने के लिये एक प्रार्थनापत्र कई प्रभाव-शाली भारतवासियों के हस्ताक्षर करा के भारत सरकार के पास 'रायल चारटर के लिये भेजा। इधर सनातनधर्म महामंडल माननीय महाराजा सर रामेश्वर सिंह बहादुर के० सी० आई०ई० दरभंगा नरेश

के नेतृत्व में एक विश्वविद्यालय स्थापित करने का प्रस्ताव करने लगा।" *

यह स्पष्ट था कि एक ही समय में और एक ही स्थान पर एक ही उद्देश पूर्ति के लिये तीन संस्थायें स्थापित होना हिन्दू जातीय वर्तमान दशा में कठिन है। इस कारण तीनों भारतहितैषियों ने अपने २ प्रस्ताव एक में मिला लेने का विचार किया। अप्रेल सन् १९११ में श्रीमती एनी बेसेंट और श्रीमान् मालवीय जी इस विषय को निश्चय करने के लिये इलाहाबाद में मिले और यह निश्चय कर लिया कि सेंट्रल हिन्दू कालेज हिन्दूविश्वविद्यालय में मिला लिया जावे श्रीमती एनी बेसेंट भारत सरकार के पास भेजा हुवा अपना प्रार्थना पत्र वापिस ले लें और वे दोनों अब हिन्दूविश्वविद्यालय के लिये प्रयत्न करें।

इस समय से माननीय मालवीय जी, स्वर्गवासी बाबू गंगा प्रसाद जी वर्मा, माननीय राजा रामपाल सिंह जी, पंडित दीन दयाल जी शर्मा और पंडित गोकर्णनाथ जी मिश्र ने हिन्दूविश्वविद्यालय के लिये हिन्दू जाति से सहानुभूति और चन्दा लेने के लिये दौरा करना आरम्भ कर दिया। और फैजाबाद जौनपुर बांकीपुर गोरखपुर कानपुर, छपरा, लखनऊ, कलकत्ता, फरीदपुर, मालदा, रावलपिंडी, लाहौर अमृतसर और मुजफ्फरनगर में हिन्दुविश्वविद्यालय का डेपूटेशन गया। सब स्थानों पर डेपूटेशन का बड़े ही उत्साह से साथ स्वागत किया गया और प्रत्येक हिन्दू ने अपनी २ शक्ति भर चन्दा दिया।

* हिन्दू यूनीवर्सिटी सोसायटी की पहली प्रोग्रेस रिपोर्ट

अक्टूबर १९११ में माननीय महाराजा रामेश्वर सिंह बहादुर दरभंगा नरेश और माननीय मालवीय जी हिन्दू विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में वाइसराय लार्ड हार्डिङ्ग से मिले। लार्ड हार्डिङ्ग ने हिन्दूविश्वविद्यालय से भारत सरकार की पूर्ण सहानुभूति प्रगट की और भारत सरकार की ओर से पूर्ण सहायता मिलने का विश्वास दिलवाया। इस समय से महाराजा दरभंगा ने भी यह निश्चय कर लिया कि वे भी अब हिन्दूविश्वविद्यालय के लिये ही प्रयत्न करेंगे और भारत धर्म महामंडल की ओर से विश्वविद्यालय के लिये जो प्रस्ताव प्रगट किया गया था।वह वापिस ले लेंगे। राना सर शिवराजसिंह जी बहादुर के० सी० आई० ई० खजुर गांव नरेश ने १$\frac{1}{4}$ लाख रुपया देकर हिन्दूविश्वविद्यालय से अपनी पूण सहानुभूति दिखलाई और उसके लिये कार्य करना आरम्भ कर दिया।

इसके बाद मेरठ, बरेली, सहारनपुर, मुरादाबाद, उन्नाव, सीतापुर, इटावा, बहरायच, कलकत्ता, बनारस, आगरा, अजमेर, उदयपुर, नैनीताल, अलमोड़ा, कश्मीर, अम्बाला, शिमला, रायबरेली, इन्दौर, कोटा, अलवर, बीकानेर, गया, बांकीपुर, लाहौर, कानपुर, लखनऊ, जोधपुर, बम्बई, मुजफ्फरनगर इत्यादि शहरों में हिन्दूविश्वविद्यालय का डेपूटेशन।घमता रहा। डेपूटेशन के साथ लगभग प्रत्येक शहर को श्रीमान् मालवीय जी गये। डेपूटेशन का प्रत्येक शहर में बड़ी धूमधाम से स्वागत किया जाता था। डेपूटेशन को प्रत्येक शहर में पूरी सफलता हुई।

श्रीमान् मालवीय जी ने अमृतसर में हिन्दूविश्वविद्यालय की आवश्यक्ता दिखलाते हुये कहा था कि :—

"वैदिक काल में हमारे पूर्वज ऋषि अद्वितीय सभ्यता के प्रवर्तक थे, परन्तु आज यह हिन्दू जाति अपने प्राचीन धर्म से विमुख होने के कारण वर्तमान संसार में तिरस्कृत हो अनाथ सी देख पड़ रही है। मनुष्य के लिये धर्म की शिक्षा महा आवश्यक है, परन्तु बृटिश सरकार ने अपनी शिक्षा प्रणाली में इसे स्थान न दिया-इस कमी के पूरी करने के लिये हम, हिन्दूविश्वविद्यालय की संस्थापना करेंगे। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में हमारी प्राचीन हिन्दू सभ्यता और प्राचीन हिन्दू साहित्य पद दलित किया जा रहा है। हम हिन्दूविश्व-विद्यालय में इसका उचित आदर कर अपने शिक्षा क्रम में इसको उपयुक्त स्थान देंगे। ग्रीस की फिलासफी, रोम की सभ्यता और इङ्गलैण्ड के पुरुषार्थ का इतिहास हमारे कठ में है परन्तु भारत को छोड़ कर कदाचित ही संसार में कोई दूसरा ऐसा देश हो कि जहां मनुष्य अपने देश के गौरव और अपने देश के इतिहास से हमारे समान अभिज्ञ हों। हिन्दू विश्वविद्यालय हमको इस लांच्छन से मुक्त करेगा। हिन्दू-विश्वविद्यालय हिन्दू जाति से अज्ञान और कलह को हटा कर शक्ति और प्रेम का संचार करेगा। जहाँ अभी अज्ञानता तम आच्छादित है वहां विज्ञान के उज्वल प्रकाश में हिन्दू जाति की अतुल शक्ति संसार को विस्मित कर देगी। अविद्या के कारण आज तक हिन्दू जाति इस शोचनीय दशा में पड़ी रही। हिन्दू जाति ने अपने देश की उपज और अपने देश की संपत्ति सुख से विदेश को भेजी और वहाँ से बना बनाया

तैय्यार माल वापिसी में लिया। कुछ ही वर्ष पहले इङ्गलैंड का मामूली व्यापार था; अमेरिका एक जंगली देश था कि जहां के मनुष्य यह भी नहीं जानते थे कि पृथ्वी कैसे जोती और बोई जाती है। परन्तु अब विज्ञान की सहायता से वे सभ्य होगये, और धनवान बन गये। केवल २५ वर्ष पहले जर्मनी में सिवाय खेती के और कुछ नहीं होता था परन्तु वही अब इङ्गलैंण्ड के व्यापार की बराबरी करने की हिम्मत करता है। इसी प्रकार ३० वर्ष पहले इस संसार में जापान की कोई स्थिति नहीं थी। परन्तु अब जापान भी संसार की मुख्य जातियों में से एक समझा जाने लगा है। सरस्वती को हमने भुलाया और लक्ष्मी भी हम से रूठ गई। हमारे देश में प्रत्येक मनुष्य की औसत आय एक आना रोज़ है परन्तु यहां की अपेक्षा इङ्गलैंण्ड में २० गुनी और अमेरिका में २१ गुनी अधिक आय है। इन सब देशों की उन्नति का मूल कारण विज्ञान की उन्नति है। हिन्दूविश्वविद्यालय विज्ञान की उन्नति का प्रबन्ध करेगा। हिन्दू विश्वविद्यालय का दूसरा उद्देश औद्योगिक शिक्षा का प्रचार करना है। इस विषय में सरकार भी प्रयत्न कर रही है परन्तु जब तक हम भी सरकार का इस कार्य में हांथ न बटावेंगे इस कार्य में पूरी सफलता न होगी। यदि अमेरिका इत्यादि देशों के समान हम भी समृद्धि शाली बनना चाहते हैं तो हमें अपना मूल मंत्र यह मानना चाहिये कि ईश्वर उनकी सहायता करता है जो स्वयं अपनी सहायता कर लेते हैं।'

"भारत वर्ष में केवल ५ विश्वविद्यालय हैं, वे भी केवल परीक्षा लेने वाले परन्तु अमेरिका में १३४, जर्मनी में २२

इङ्गलैंएड में १८, फ्रांस में १५ इटली में २१ विश्वविद्यालय हैं। यह बात गलत है कि इन देशों में ऊपर गिनाये हुवे सब विश्वविद्यालय सरकार के ही स्थापित किये हुये हैं। पिछले ३० वर्ष में ही अकेले अमेरिका देश में शिक्षा प्रचार के लिये ६० करोड़ का दान जनता की ओर से दिया गया। इङ्गलैंएड में इसी साल में ८ करोड़ रूपया दिया गया। थोड़े ही से समय में इङ्गलैंएड ने अपने विश्वविद्यालयों की संख्या ६ से बढ़ा कर १८ कर ली। इतने पर भी प्रिसंपल रिनाल्ड बृटिश जनता से यह कह रहे हैं कि बृटेन की शिक्षा सम्बन्धी उन्नति सभ्य संसार की गति के समान नहीं है। इस समय तक भारत वर्ष में एक भी जातीय विश्वविद्यालय न बन सका। क्या भविष्य में भी भारतवर्ष बिना जातीय विश्वविद्यालय के ही बना रहेगा? प्राचीन काल में हमारे ही देश में महर्षि वशिष्ट और गौतम के गुरुकुल थे कि जिनमें एक २ हजार विद्यार्थी विद्योपार्जन किया करते थे। नलंद विश्वविद्यालय में ही १०,००० विद्यार्थी पढ़ते थे। परन्तु आज भारतवर्ष के पाचों विश्वविद्यालयों में मिलाकर कुल २८००० विद्यार्थी पढ़ते हैं। अमेरिका में २४,००० केवल शिक्षक ही हैं। पेरिस विश्वविद्यालय में १२,००० विद्यार्थी हैं। वर्लिन विश्वविद्यालय में ६५०० विद्यार्थी पढ़ते हैं। अमेरिका के प्रत्येक विश्वविद्यालयों में लगभग ६००० विद्यार्थी हैं और इंगलैंड के प्रत्येक विश्वविद्यालय में २५०० से ३००० तक विद्यार्थी पढ़ते हैं। क्या फिर भारतवर्ष में २० करोड़ हिन्दुओं के लिये भी एक जातीय विश्वविद्यालय बनना कठिन है?"*

*हिन्दूविश्वविद्यालय समिति की रिपोर्ट पहली।

महाराजा मैसूर, महाराजा कश्मीर, महाराजा ग्वालियर, महाराजा इन्दौर, हिन्दूपति महाराणा उदयपूर, हिजहाइनेस महाराजा सर गंगासिंह जी बहादुर जी० सी० एस आई बीकानेर नरेश, महाराजा कोटा, महाराजा सर प्रतापसिंह बहादुर, जोधपुर, दरबार, महाराजा अलवर, महाराजा नाभा, महाराजा कासिम बाज़ार, महाराजा बनारस, महाराजा बलरामपूर, इत्यादि हिन्दू राजाओं ने हिन्दू विश्वविद्यालय के कार्य से सहानुभूति प्रगट की और उसके लिये अपना समय और धन दिया। बंगाल के नेताओं में बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, बाबू अंबिकाचरण मजुमदार, बाबू भूपेन्द्रनाथ वसु, डाकृर सर राशबिहारी घोष, स्वर्गीय सर गुरुदास बनर्जी, डाकृर सर्वाधिकारी, पंजाब में लाला लाजपतराय, लाला हंसराज पंडित दीनदयाल, लाला हरकिशन लाल, राय रामशरन दास, राम गोपाल दास भंडारी बहादुर, बंबई में सर भालचंद्रकृष्ण, सर नरायन चन्दावरकर हिज हाइनेस आग़ाख़ां, सर विट्ठलदास थैकरसी, नरोत्तमदास मूरजी गोकुलदास ; बिहार में माननीय कृष्णासहाय, माननीय सच्चिदानन्द सिंह, माननीय हसन इमाम, मध्यप्रदेश में राजा वल्लभदास, और संयुक्त प्रांत में डाकृर सर सुन्दर लाल, डाकृर तेज बहादुर सप्रू, पंडित मोतीलाल, राजा मोतीचद, राना शिवरानासिंह खजूर गांव, राजा सूर्यबख्श सिह जी कसमंडा नरेश, राजा रामपाल सिंह जी, राजा प्रताप बहादुर सिंह जी, राजा मांडा, इत्यादि सब हिन्दू जाति हितैषियों ने हिन्दूविश्वविद्यालय को अपना समय और धन देकर हिन्दू जाति के प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा किया।

डाक्टर सर राशबिहारी घोष ने हिन्दू विश्वविद्यालय से अपनी सहानुभूति दिखलाते हुये कहा था कि "हमारा मुख्य उद्देश यह है कि हम हिन्दू रीति और हिन्दू आदर्श के अनुसार राष्ट्रीय चरित्र का संगठन करें और हिन्दू विश्वविद्यालय से ऐसे योग्य राज्य-भक्त नागरिक निकालें कि जो अपने देश के अगुआ बन देश को विज्ञान, साहित्य-कला, कौशल, और सामाजिक उन्नति में आगे पहुंचा दें। इस उद्देश की पूर्ति के लिये हम अपने विद्यार्थियों को उस हिन्दू धर्म की उच्च शिक्षा और पवित्रता की शिक्षा देंगे। कि जिसमें कई बड़ी और पवित्र आत्माओं को आश्रय मिला; जिसने शताब्दियों से करोड़ों मनुष्यों को अपनी गोद में पाल कर उन्हें सतमार्ग की शिक्षा दी, उन्हें मनुष्यता और भक्ति की शिक्षा दी, और जिसके लिये कि आज हम सब हिन्दुओं को गर्व है।"

कुछ लोगों का हिन्दूविश्वविद्यालय पर यह आक्षेप था कि हिन्दूविश्वविद्यालय और मुसलिम विश्वविद्यालय अलग २ बन जाने से भारतवर्ष की दो प्रधान जातियों में वैमनस्य बढ़ जावेगा। इस आक्षेप को निर्मूल बतलाते हुये डाक्टर सर राशबिहारी घोष ने अपनी वक्तृता में कहा था कि "यह सत्य है कि जातीय शिक्षा में कुछ दोष हैं। परन्तु हमें यह याद रखना चाहिये कि हम पूर्व ससार में नहीं रहते हैं। एक बात मुझे निश्चय है—कि धार्मिक असहिष्णुता का जोश सच्चे ज्ञान और सौजन्यता के सामने तिरस्कृत होगा। सच्ची विद्वता और उदार हृदयता का साथ है"। संकुचित मन और संकुचित हृदय साथ रहते हैं।" "उच्च शिक्षा देने के लिये जातीय विश्वविद्यालय बनने में कोई बाधा

न होना चाहिये, मुझे विश्वास है कि जातीय विश्वविद्यालय हिन्दू और मुसलमानों की बढ़ती हुई मित्रता में किसी प्रकार की रुकावट न उपस्थित कर सकेंगे। क्योंकि श्रीयुत अली इमाम के शब्दों में पहले हम सब भारतवासी हैं, फिर हिन्दू या मुसलमान।"

बाबू सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी ने हिन्दू विश्वविद्यालय से अपनी पूर्ण सहानुभूति प्रगट करते हुये कहा था कि "हमें यह निश्चय है कि शिक्षा के प्रचार से हिन्दू और मुसलमान दोनों अपना एक दिव्य भविष्य समझ सकेंगे कि जिसके लिये हम सब प्रयत्न कर रहे हैं संभव है कि भिन्न २ मार्गों से हम प्रयत्न कर रहे हों। जमुना और गंगा के समान दोनों जातियाँ अमूल्य सम्पत्ति संगम के लिये आगे जा रहीं हैं वहां संगम से मिल कर वे एक धारा होकर आगे बहती हैं सब को समृद्धि शाली और सुखी बनाती हुई वे अनन्त संसार सागर में मिल जातीं हैं। इस प्रकार यह दोनों जातियें अपनी २ जाति से उन्नति कर संगम की ओर बढ़ रहीं हैं। वहाँ मिल कर उनका एक संयुक्त-राष्ट्र बनता है, वहाँ वे अपनी दिव्य भवितव्यता को पूरा करतीं हैं और तब फिर राष्ट्रीयता का उच्च विकाश कर समस्त मानव समाज में मिल जातीं हैं।" "मैंने सुना है कि हमारा यह कार्य एक जातीय कार्य है। इससे हिन्दुओं में अनुदारता बढ़ जावेगी और राष्ट्रीय उन्नति में बाधा पड़ेगी। यदि ऐसी आशंका होती तो मैं किसी प्रकार भी इसमें भाग न लेता और न अपने देश वासियों से इसके बनाने के लिये अपील करता। यह केवल एक शिक्षासंबंधी कार्य है। इससे हमारी उदारता बढ़ जायगी, इसके कारण

हम उन सब का सम्मान कर सकेंगे कि जो संसार में सत्य, पवित्र और सुन्दर है या जिससे हमारी राष्ट्रीयता दृढ़ होगी।"

श्रीमान् मालवीय जी, महाराजा दरभंगा, स्वर्गवासी बाबू गंगा प्रसाद वर्मा, पंडित गोकर्णनाथ मिश्र के कठिन परिश्रम से कुछ कम एक करोड़ रुपया हिन्दू विश्वविद्यालय के लिये दान दिया गया। यद्यपि २० करोड़ की हिन्दू जाति के विश्वविद्यालय के लिये १ करोड़ रुपया बहुत कम है; परन्तु हिन्दू जाति पर आगे सहायता की आशा रख ता० ४ फरवरी सन् १६१८ को शुभ मुहूर्त में शास्त्रोक्त रीति से हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना हो गई है। हिन्दू हितैषी वाइस राय लार्ड हार्डिंग ने इस विश्वविद्यालय की नीव रक्खी थी सन् १६१८ में हिन्दू विश्वविद्यालय की पहली परीक्षा हुई है।

प्रत्येक हिन्दू को अपने हृदय पर यह अंकित कर लेना चाहिये कि हिन्दू विश्वविद्यालय के सुयोग्य संचालन में भी हिन्दू जाति की भावी उन्नति और राष्ट्रीय संगठन निर्भर है। प्रत्येक आत्मा में यह आभास हो जाना चाहिये कि हमारी केवल उन्नति और समृद्धि ही नहीं किन्तु हिन्दू जाति की मान मर्यादा इस महत कार्य के सुयोग्य संचालन पर निर्भर है। यह आशा की जाती है कि हिन्दुओं की पवित्र विश्वनाथपुरी में माता जान्हवी के तट पर स्थापित हिन्दू विश्वविद्यालय को दृढ़ बनाने के लिये हिन्दू जाति के प्रत्येक स्त्री पुरुष अपनी शक्ति भर अपना समय, अपना धन और अपनी योग्यता उस को अर्पित करेंगे।"

उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूति कर्मसु।
भविष्यतीत्येव मनः कृत्वा सततमव्यथैः॥

नवमां अध्याय।

विविध विषय

हिन्दू धर्म।

"प्रत्येक हिन्दू का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने धर्म, और अपनी जाति को संसार के सन्मुख आदरणीय और गौरव पूर्ण बनाने का प्रयत्न करे। इस पृथ्वी में हिन्दू जाति के बराबर की पुरानी और गौरव पूर्ण सभ्यता वाली दूसरी और जाति नहीं है। परन्तु आज यह हिन्दू जाति समय के फेर से विपत्ति और दुर्दशा में पड़ी हुई है। संसार की सृष्टि के बाद पहले पहिल भारत की पवित्र भूमि में ही पवित्र गङ्गा के किनारे पूज्य ऋषियों ने ईश्वर दत्त वेद रचे। इसी भारतवर्ष में ही उन वीर और धर्मात्माओं ने जन्म पाया था कि जिनका वर्णन महा भारत में हम पाते हैं। महाभारत की बराबरी का संसार में दूसरा ग्रंथ आज तक नहीं रचा गया। हिन्दुओं में प्राचीन गौरव का मुख्य कारण यह था कि प्राचीन काल में हिन्दू अपने धर्म में अटल विश्वास और श्रद्धा रखते थे।"

"महाभारत से संसार को यही शिक्षा मिल रही है कि अंत में धर्म की सदैव विजय होती है। रामायण हिन्दुओं का दूसरा अमूल्य रत्न है। अभाग्य की बात है कि आज कल हमारे बालक अपने जातीय ग्रन्थों में भरा हुआ अमूल्य गौरव पूर्ण इतिहास न पढ़कर रोम और ग्रीस के इतिहास को याद

करने में व्यग्र रहते हैं। " मैं किसी धर्म का विरोधी नहीं हूं, परन्तु मेरा यह विश्वास है कि इस संसार में जितने धर्म हैं उन सब में हिन्दू धर्म श्रेष्ठ हैं।" *

रहन सहन।

श्रीमान् मालवीय जी हिन्दू सभ्यता, हिन्दू आचार व्यवहार और नीति के पक्षपाती है। आपका यह विश्वास है कि हिन्दू जाति का इसी में गौरव है कि हिन्दू जाति अपनी प्राचीन सभ्यता पर अटल रहे। सार्वजनिक कार्य के लिये देश में इतना घूमते रहने पर इतने अधिक कार्य के सम्पादन करने पर भी चाहे आप को और किसी कार्य में देर हो जावे आप नित्य प्रातः काल भगवत भजन और संध्या नियमित समय पर करते हैं। हिन्दू विश्व विद्यालय के डेपुटेशन में कई स्थानों पर आपको संस्कृत में अभिनन्दन पत्र दिये गये थे। इन अभिनन्दन पत्रों का उत्तर आप ने संस्कृत में वक्तृता देकर ही दिया करते थे। आप का यह सिद्धांत है कि प्रत्येक हिन्दू को संस्कृत की शिक्षा अवश्य मिलनी चाहिये, संस्कृत के ज्ञान से हम अपनी प्राचीन सभ्यता और पूज्य ऋषियों की योग्यता का कुछ ज्ञान प्राप्त कर अपने प्राचीन साहित्य का कुछ रसास्वादन कर हम हिन्दू जाति को फिर संसार की सभ्य जाति में श्रेष्ठ बना सकेंगे।

स्वदेशी।

श्रीमान् मालवीय जी स्वदेशी वस्तु के उपयोग करने के

* सन् १६१८ में लाहोर में दी हुई श्रीमान् मालवीय जी की वक्तृता का अंश लेखक—

बहुत बड़े पक्षपाती हैं। आपने सन् १९०७ में स्वदेशी के सम्बन्ध में वक्तृता देते हुये कहा था कि "यह कहा जाता है कि देश की उन्नति देशी कारीगरी की वृद्धि करने से होगी। यह तुम केवल एक प्रकार से कर सकते हो, कि तुम स्वदेशी को अपना धर्म समझो। केवल बदला लेने की इच्छा या असंतोष प्रगट करने के उद्देश से नहीं वरन देश के प्रति अपना कर्त्तव्य जानकर तुम किसी एक या दो बात में नहीं वरन सब कामों में स्वदेशी के भक्त बन जावो संसार में भारतवर्ष को छोड़कर कोई दूसरा और देश नहीं है जहां देश सेवा की ऐसी अधिक आवश्यकता हो जैसी कि यहां।" "मैं स्वदेशी के सम्बन्ध में बहुत कुछ सुना करता हूं, परन्तु मैं नहीं जानता कि हमारे देश वासियों ने इसे अपने हृदय में अंकित कर लिया है कि नहीं 'स्वदेशी हमारा राष्ट्रीय कर्त्तव्य है। आप सब याद रखिये कि राष्ट्र के प्रति हमारा यह कर्त्तव्य है।" आगे आपने कहा था कि "यदि तुम्हें भारतवर्ष की बनी हुई चीजें मिल सकतीं हैं तो तुम चमक दमक वाली पालिशदार सस्ती विदेशी चीजें मत खरीदो। देशी चीजें खरीदो और इस प्रकार अपने निर्धन भाइयों के हाथ में चार पैसे पहुंचने दो। ध्यान रखो कि इस प्रकार तुम अपने भूख से पीड़ित निर्धन भाइयों को भोजन पहुंचाते और भूंख की कठिन व्यथा से उनकी रक्षा करते हो।"

केवल एक या दो देशी चीज ही खरीद लेने में हम स्वदेशी के भक्त नहीं कहे जा सकते, वरन हमें जीवन के सब कार्यों में स्वदेशी बनना चाहिये। श्रीमान् मालवीय जी अपने सब कामों में स्वदेश-प्रेमी हैं। उनकी स्वदेशी सादी पोशाक,

उनकी मधुर और सादी बात चीत और उनकी सात्विकी रहन सहन भारतवासियों के लिये आदर्श है।

गुरु की भक्ति।

श्रीमान् मालवीय जी अपने गुरू पंडित आदित्यराम भट्टाचार्य जी को बहुत मानते हैं। अपने कठिन से कठिन कार्य में श्रीमान् मालवीय जी अपने गुरुदेव जी से सलाह लिया करते हैं और उनके बतलाये हुये पथ का श्रद्धा और भक्ति से अवलंबन करते हैं। पण्डित आदित्यराम भट्टाचार्य जी बहुधा कहा करते हैं कि 'यदि संसार में मुझे किसी का घंमड है तो वह अपने शिष्य मदन मोहन मालवीय का।"

शरीरिक व्यायाम।

श्रीमान् मालवीय जी देशी व्यायाम दंड़ मुगदर और अखाड़े में कुश्ती लड़ने के पक्षपाती हैं। उनका कहना है कि यह देख मुझे बहुत दुख होता है कि हमारे शिक्षित नवयुवकों का शरीर बहुधा निर्बल होता है। नित्य व्यायाम करने की चाल स्कूल और कालेजों के विद्यार्थियों में उठ सी गई है। मैं चाहता हूं कि मुहल्ले २ अखाड़े रहा करें। उसमें मुहल्ले के युवक व्यायाम किया करें और कुश्ती लड़ा करें। शिक्षित जन अखाड़े में जाकर व्यायाम करना या कुश्ती लड़ना अपने योग्य काम नहीं समझा करते हैं यह दुर्भाग्य है, इसी का यह फल है कि बहुधा शिक्षित जनों का स्वास्थ खराब रहा करता है। पढ़े लिखे मनुष्यों को चाहिये कि अखाड़ों में जाकर

व्यायाम की देशी रीति को उत्साहित करें। नवयुवकों को व्यायाम करने के लिये उत्तेजित करें।

अछूत जाति

श्रीमान् मालवीय जी ने भारतीय व्यवस्थापक सभा में वक्तृता देते हुए सन् १९१६ में कहा था कि "हम जानते हैं कि कई स्थानों में नीच जाति के मनुष्य भी विद्या पाकर बड़े पदों पर पहुंच गये हैं, और उनका आदर सत्कार भी उसी प्रकार किया जाता है जैसे कि किसी दूसरी जाति के पढ़े लिखे मनुष्य का किया जाता है। प्रयाग में मुझे चमार जाति के एक सज्जन से मित्रता करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यह सज्जन मेरे ही विश्वविद्यालय के एम० ए० थे। मैं उनसे वैसा ही व्यवहार करता था जैसा कि अन्य जाति के मित्रों से। और ऐसी दशा में मैं चमार या चंडाल के साथ भी उसी प्रकार से प्रेम का व्यवहार करूंगा। यह नहीं कि पुरानी प्रथायें बदल न रही हों, वे सब बदल रही हैं; उन्हें बदलना होगा। परन्तु इस बात का हमें ध्यान रखना चाहिये कि सामाजिक प्रथायें प्राचीन भाव की दशाओं का फल होती है। उन्हें हम बलात्कार से नहीं बदल सकते हैं। शिक्षा ऐसी युक्ति है कि जिससे सब सामाजिक अंतर और अनुदार विचार दूर हो जाते हैं। हमें चाहिये कि हम शिक्षा का अधिक २ प्रचार करें।" *

* गवर्नमेंट आफ इण्डिया गजट मार्च १९१६

नवयुवकों को उपदेश;

श्रीमान मालवीय जी नवयुवकों को यह उपदेश दिया करते हैं कि उन्हें चाहिये कि देश सेवा के लिये अपने को अच्छी तरह से तैय्यार करें। उनका उपदेश रहता है कि युवकों को अपना समय सदैव अच्छी संगति और अच्छे कार्य में बिताना चाहिये। उत्तम पुस्तकों के पढ़ने का आप अनुरोध किया करते हैं। श्री मद्भागवत और महाभारत का आपने कई बार पाठ किया है। आपका यह कहना है कि उनके जीवन में इन पुस्तकों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा है। आप युवकों को रामायण, महाभारत और श्रीमद्भागवत व अंगरेजी में स्लेकी की सेल्फ हेल्प और करेक्टर पढ़ने का उपदेश दिया करते हैं। आपका कहना है कि उपन्यास पढ़ने में नवयुवकों को समय नष्ट न करना चाहिये।

कन्याओं को शिक्षा के आप कट्टर पक्षपाती हैं। आप कन्याओं को हिन्दी और संस्कृत की शिक्षा देना उत्तम समझते हैं। श्री रामायण, महाभारत और श्रीमद्भागवत कन्याओं को पढ़ाई जाना चाहिये। उनको ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिये कि वे भावी हिन्दू सन्तान को पौरुषी, बल-वान, विद्वान् और स्वदेशानुरागी बना सकें।

प्रयाग में मई १६१८ में सेवा समिति के सालाना जलसे में श्रीमान् मालवीय जी ने सभापति का आसन ग्रहण कर नवयुवकों को समाजसेवा करने का उपदेश देते हुवे कहा था कि।

"स्वयं सेवकों ने इस विचार से कि वे किसी की व्यथा

को दूर कर सके हैं एक महान सुख अनुभव किया होगा। सेवा समिति के काम से एक नया जोश देश में फैल गया है समाज की सेवा करने के लिये सारे संसार में सेवा समिति ऐसी संस्थाओं की आवश्यक्ता है, अन्य सभ्य देशों में ऐसी संस्थाएं अब हो भी गई हैं, भारतवर्ष में ऐसी संस्था की बडी आवश्यक्ता थी क्योंकि यहां के मनुष्य विशेष कर स्त्रियां निस्सहाय हैं। बड़ी डिग्रियां प्राप्त करने धनराशि इकट्ठा कर लेने से क्या, जिन बालकों ने समाज सेवा में अपना तन मन लगाया है निश्चय ही उनके माता पिता बड़े ही भाग्यवान हैं। शास्त्रों का मत है कि हम अपरिचित और अभ्यागत की सहायता कर अपने पूर्वजों के लिये पुण्य संचय कर सकते हैं।"..............

"आठारहों पुराणों की शिक्षा का सार यह है कि दूसरों के साथ भलाई करने में पुण्य है और दूसरों को कष्ट देने में पाप है।

नत्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नाऽपुनर्भवम्
कामये दुःखतप्तानां, प्राणिनामार्तिनाशनम्

'न मुझे राज्य की तृष्णा है और न मुझे स्वर्ग या निर्वाण की अभिलाषा है मैं केवल यह चाहता हूं कि मैं दुखित जनों के कष्ट को निवारण करने में समर्थ होऊं"

"हमा ऋषियों ने बार २ यह कहा है कि जिसने एक बार भी परोपकार किया है उसका जीवन सुफल है। समाज सेवा के अवसर केवल मेलों ही में नहीं हुआ करते हैं। हमारे जीवन की प्रत्येक घड़ी मेंहमारे सामने दूसरों के कष्ट और दुःख दूर करने और दूसरों को सांत्वंना देने के अवसर आया

करते हैं। हमारी सहायता का केंद्र केवल मनुष्य मात्र के लिये ही परिमित न रहना चाहिये वरन् अन्य जीवों की भी हमें फिकिर करना चाहिये।"–"सेवा समिति के प्रत्येक सभ्य को अपना रहन सहन और बर्ताव ऐसा बनाना चाहिये कि उस पर प्रत्येक मनुष्य को इतनी श्रद्धा और विश्वास रहे कि जहां वह हो उस मुहल्ले के मनुष्य आपत्ति के समय अपने को व्यथाओं से रक्षित मानने का आसरा रक्खें।"

श्रीमान् मालवीय जी ने अपनी वक्तृता में यह समझाते हुवे कि प्रत्येक नवयुवक का यह कर्त्तव्य है कि वह सेवा समिति में भाग लेकर अपने भाइयों की सहायता करें कहा कि "यह याद रखना चाहिये कि शिक्षा का अर्थ यह नहीं है कि केवल पुस्तकें याद कर डालीं जावें बरन् सच्ची शिक्षा वही है कि जिसका उद्देश समाज सेवा है।"

दशवाँ अध्याय

संसार व्यापी युद्ध और भारतीय सुधार आन्दोलन।

अगस्त १६१४ में न्याय और सत्य की रक्षा और अपने दिये हुये वचन को रखने के लिये निर्दोष बेलजियम और फ्रांस की सहायता में इङ्गलैंड ने जर्मनी और आष्ट्रिया से युद्ध ठान दिया। युद्ध का ठनना था कि बृटिश सम्राज्य के सब भागों से जन और धन रणक्षेत्र में पहुंचाने की तैय्यारियां होनें लगीं। जब आस्ट्रेलिया और केनाडा में फ्रांस की रण भूमि के लिये सेवा भेजने के मनसूबे हो रहे थे, धन्यवाद है लार्ड हार्डिंग को—भारतवर्ष के वीर सिपाही कई लाख की संख्या में पददलित बेलज्रियम की रक्षा के लिये बेलजियम और फ्रांस की रण भूमि में सब से आगे जाडटे। भारतवर्ष ने युद्ध जीतने के लिये लाखों वीर सैनिक भेजे, सेना के रोज़ाना ख़र्च के लिये कई करोड़ रुपया बिना मांगे दिया, मित्र राष्ट्रों के उदर पोषण के लिये यहां से अन्न भेजा। राजा से रंक तक सब ने अनेक असुविधायेँ सहीं प्रेमी और स्नेहियों के वियोग सहे, परन्तु युद्ध में योग देने से कुछ भी उठा न रखा।

ऐसे समय में भी जब कि हम सब कुछ कर रहे थे, और सब कुछ करने के लिये तैय्यार थे, जब कि सत्य और न्याय को पैरों तले रौदँता देख हमारा जोश हमें अकर्मण्य नहीं रहने

देता था, तब भी हम से कहा गया कि तुम हिन्दुस्तानी हो इसलिये वालंटियर नहीं बन सकते, तुम भारतवासी हो इस लिये लफटेंट बनने की तुम में ल्याकत नहीं, तुम्हारा रङ्ग स्वेत नहीं इसीलिये तुम अस्त्र नहीं बांध सकते। कैसी हमारी राजभक्ति और कैसा यह बर्ताव। कहां हमारी सुहृदयता और कैसी यह इनेगिनों की उदासीनता। यद्यपि समय समय पर हमारा दिल दुखाया गया परन्तु तिस पर भी हम अपना कर्त्तव्य जन और धन से पूरा करते रहे।

शिकायतें हमारी कई थीं परन्तु यह हमने मान लिया कि अच्छा; यह युद्ध का समय है कोई भी आंतरिक प्रश्न इस समय न उठाया जाय। चीन में प्रजातंत्र स्थापित हुये बहुत दिन नहीं हुये हैं, रुस में प्रजा की न सुनकर मन मानी करने वाले बलिष्ट ज़ार को अलग कर प्रजा सत्तात्मक शासन देखते २ स्थापित कर दिया गया, पोलेंड और आयर्लैंण्ड ने हमारे सामने ही यह कहा कि पहले स्वराज्य देदो तब सहायता मांगो, यह सब हम देखते रहे परन्तु उसी न्याय और सत्य पर कि जिसके लिये युद्ध छिड़ा है विश्वास किये हुये सावधान रहे। इङ्गलेंड राजनीतज्ञ अपनी वक्तृताओं में तो नागरिकों के बराबर स्वत्व, राष्ट्रों की स्वाधीनता और प्रजा सत्तात्मक राज्य को स्वाभाविक और आवश्यक कहते हैं परन्तु हमारे लिये भेद भाव से भरे हुये बर्ताव से हमें आगे भी मुक्त होने की आशा नहीं देख पड़ती।

बृटिश साम्राज्य और इङ्गलेंड के धुरंधर राजनीतज्ञों के मस्तिष्क में बृटिश साम्राज्य का युद्ध के बाद कैसा संगठन होना चाहिये इसके प्रश्न गूंज रहे थे। बृटिशि साम्राज्य को

सुदृढ़ और स्वपोषित बनाने की तरकीबें विचार रहे थे। इङ्गलेंड और उपनिवेशों का कैसा सम्बन्ध रहेगा यह निश्चय करने में व्यग्र हो रहे थे। सन् १९१६ में भारतवर्ष से भी वाइ-सराय ने युद्ध के बाद भारतवर्ष के नवीन अधिकार के सम्बन्ध में एक खरीता भारत सचिव के पास भेजा था। परन्तु भारतवासियों के प्रतिनिधियों से इस विषय में सलाह या मशविरा लेनेका कोई प्रयत्न न किया जाता था। धीरे २ यह भी पता लगने लगा कि यहां के अधिकारी वर्ग और एङ्गलो इंडियन, भारतवासियों को किसी नवीन स्वत्व के लिये अयोग्य जताकर स्वंय ही भारत के भविष्य का निर्णय कर देना चाहते हैं। इसी समय राउन्डटेबुल पत्र के सम्पादक मिस्टर कर्टिस का रहस्य खुला। मिस्टर कर्टिस ने दलबंदी करके बृटिश जनता और बृटिश राज्यनीतज्ञों के सामने इस बात को साबित करने का प्रयत्न आरंभ किया कि भारतवर्ष स्वराज्य के योग्य नहीं है इसलिये साम्राज्य के नये सङ्गठन में उपनिवेशों के साथ उसे बराबरी का स्थान, मान और स्वत्व नहीं मिल सकता। विलायत में लार्ड सिडेनहम ने लेखों और वक्तृताओं द्वारा भारतवासियों को स्वराज्य के लिये अयोग्यता दिखलाना आरम्भ किया, आप ने अपने पक्ष के प्रमाण में यहां तक लिख डाला कि " (भारतवर्ष में) कठिनाई से कोई सप्ताह ऐसा बीतता है जिसमें जिले के अफसर को कोई न कोई उपद्रव न शांत करना पड़ता हो।"

एक ओर तो एंग्लो इण्डियनों का भारतके भविष्य को मनमानी रीति से निश्चय कर देने का प्रयत्न और दूसरी ओर राजभक्त और वीर भारतवासियों के साथ अधिकारी

वर्ग की असहानुभूति और सख़्तियों ने भारतवर्ष के एक ओर से दूसरे ओर तक खलबली मचादी। भारतीय आकाश पर काले बादल देख पड़ने लगे, बंगाल में सैकड़ों होनहार नवयुवक भारत रक्षा कानून के प्रयोग से बंधन में डाल दिये गये, प्रेसों का गला घोंटना आरंभ हुआ, उत्तरदाइत्वपूर्ण सरकारी नौकरों ने खुल्लमखुल्ला वक्तृतायों द्वारा भारतीय आशाओं का विरोध और तिरस्कार करना आरंभ कर दिया। जैसी २ अधिकारीवर्ग की सख्तियां बढ़ती जाती थीं वैसेही वैसे प्रजा में आन्दोलन बढ़ता जाता था। कई भारतीय नेताओं का दूसरे प्रांत में जाना बंद कर दिया गया, कई प्रजा हितकारी पत्र कई प्रांतों में जाने से रोक दिये गये। और अंत में अधिकारीवर्ग ने अपनी नौकरशाही का ज्वलंत नमूना देने के लिये १६ जून १६१७ को मद्रास में श्रीमतीएनी बेसेंट, श्रीयुत वाडिया और मि० अरंडेल को कैद करके उटकमंड पहाड़ की चोटी पर भेज दिया इनका दोष यही था कि ये भारत का हित चाहते थे और अधिकारी वर्ग के कामों की सत्य आलोचना करते थे। सरकार के इस कार्य से देशभर में सनसनी फैलगई। प्रत्येक शहर और जिले में कई सभाये हुईं सरकारी अफसरों ने कहीं २ इन सभाओं को रोकने का प्रयत्न भी किया, परन्तु उन्हें इसमें असफलता हुई ; सारा देश इस बातपर तुल गया था कि यदि अब आगे सख्ती की गई तो सत्याग्राह का आश्रय लेंगे। देशभर में सभाओं द्वारा सरकार के इस कार्य से रोश और घोर असंतोष प्रगट किया गया। इसी समय में इसी उद्देशसे एकत्रित कीगई लखनऊ की प्रांतीय विशेष कांग्रेस में श्रीमान् मालवीय जी ने भारतवासियों का असंतोष प्रगट करते हुवे

कहा था कि " सरकार ने मिसेज़ बीसेन्ट को नज़रबन्द करके बड़ी ग़ल्ती की है। उनका इस तरह अपमान करना, उनकी स्वतन्त्रता छीनना बड़ा भारी अन्याय है। पर इस समय हमें सोचना चाहिये कि हमारा कर्त्तव्य क्या है? जब अंग्रेज़ लोग यहां नहीं आये थे तब भी हिन्दुस्तानी लोग राज्य करते थे। इस समय भी एक तिहाई देश पर हिन्दुस्तानी राज कर रहे हैं। प्रकृति सदा अपना बाग सर-सब्ज़ रक्खेगी, भारत पर सैकड़ों नादरशाही हमले हुये पर वह अब भी क़ायम है। यूरोप भी जहां लाखों आदमी कट गये हैं और कट रहे हैं। लड़ाई के बाद क़ायम रहेगा। जब रहना है तब अधिक सुख से क्यों न रहा जाय? हम ज़्यादा सुख से कैसे रह सकते हैं, यही देखना है। अनुभव से देखा गया है कि अपने ऊपर अपना प्रबन्ध रखना सब से अच्छी बात है। अपनी पंचायतों का होना बहुत अच्छा होता है। अपने ऊपर अपना राज उम्दा राज कहलाता है संसार में ऐसे ही राज का लोग डंका पीट रहे हैं। दादाभाई नौरोजी ने १८८५ की कांग्रेस में यह प्रस्ताव उपस्थित किया था कि रियाया के प्रतिनिधियों द्वारा शासन करने की प्रथा ही राज करने का अच्छा तरीक़ा है, इस के बिना हम लोग दास की तरह हैं। इसी विषय पर १८८६ की कांग्रेस में बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने आवाज़ उठाई थी। १८८६ में मि० ब्रेडला ने भी इस बात को कहा था। १६०५ में मि० गोखले ने बनारस की कांग्रेस में अपने भाषण में कहा था कि देश का शासन हिन्दुस्तानियों के फ़ायदे के लिये हो और हम भी उपनिवेशों की भांति अपने देश का शासन अपने आप करने लगें। १६०६ में दादाभाई ने कलकत्ते

की कांग्रेस में इस बारे में बहुत कुछ कहा था। १९१६ में कांग्रेस तथा मुसलिम लीग ने स्वराज्य का प्रस्ताव इसी लखनऊ नगर में बड़े ज़ोर शोर से पास किया था। अफ़सर लोग हम से कहते हैं कि यह स्वराज्य की मांग तुम ने कब से उठाई, यह तो एक ही दो वर्ष की सूझ है। उनको ३० वर्ष पहिले की बात याद नहीं है। पहिले जो कुछ इस विषय में कहा सुना जा चुका है, हम कहते हैं, उतने पर हमने इधर ग़ौर तक नहीं किया है। ३० वर्ष से कांग्रेस वाले इस बात के उठाने के गुनहगार हैं। अफ़सरों की निगाह में यह गुनाह है। पर हम लोग इसे संसार की सेवा समझते हैं। संसार सेवा का यह मन्त्र है। विलायत वालों का कहना है कि प्रजा की राय से होने वाला राजही सब शासनों में उत्तम शासन है। इस सब का निचोड़ यह है कि सब से अच्छे राज का एक ही तरीक़ा है और वह यह है कि प्रजा के विचार के अनुकूल होने वाला राज। ईश्वर की इससे बढ़कर और कोई सेवा नहीं, कि प्रजा की इच्छानुसार राज हो। अब इसके बिना काम चल ही नहीं सकता।"

आगे भी श्रीमान् मालवीय जी ने डर दिखलाते हुये कि युद्ध के समय में भी हम पर पूरा विश्वास नहीं किया गया, हमारी तकलीफ़ों के मिटाने की कोई कोशिश नहीं की गई, हमारी सलाहें और हमारा सहायता देने की इच्छा का तिरस्कार किया गया है, यह कहा था कि "हम मदद करते हैं। पर वह भी नहीं मानी जाती। हाय! हम भीख मांगते हैं कि हमारा भी एक प्रतिनिधि साम्राज्य कांग्रेस में रख लिया जाय। हम स्वयं इसके अपराधी हैं। १८८६, १८८७ तथा

१८८८ में जिस जोश से काम हो रहा था उसी जोश से हमने काम नहीं किया। नहीं तो इस समय हम इस दशा को न पहुंच जाते। हमारी इतनी गिरी हालत न हो जाती एक छोटे से छोटा, दो कौड़ी का अंग्रेज की सूरत रखने वाला किरानी हमें बुरी निगाह से देखता है। अगर हममें शरम और हया है तो अब ऐसी कोशिश करें कि इस हालत से छुटकारा मिले। वहस है कि क्या करें? काम करने की क्या हद है? हम प्रस्तावों का कोशिश की हद नहीं बनाना चाहते। मक़सद को हासिल करना ही कोशिश की हद है। नुक़सान फ़ायदे का ख़्याल मत करो। विपत्तियों की चिन्ता छोड़ दो। ईश्वर का नाम लेकर, देश तथा जाति के लिहाज़ से सीधे रास्ते पर चले जाओ। रास्ता साफ़ है तो बेहतर है। अगर मुसीबतें पड़ें तो मुबारक हैं। पर दुश्मनों के सामने तौहीन मत कराओ। क़स्द करलो कि स्वराज्य का मक़सद गांव २ घर २ और कोने २ में फैलायेंगे। कांग्रेस, कांफ्रेंस और लीगों

ताक़ में रखिये, आइये और काम में हाथ लगाइये। परमेश्वर और देश के नाम पर मन से भय निकाल डालिये। इस तरह निकाल डालिये जिस तरह दूध से मक्खी निकाली जाती है। जब आप आगे बढ़ने के लिये निकलेंगे तो रास्ते से विरोधी भाग जांयगे। वे रास्ता साफ़ कर देंगे। बिना मुसीबत झेले काम नहीं चलेगा। आराम से बैठे हुये चिट्ठी भेजकर स्वराज्य नहीं मिल जायगा*

* प्रताप प्रेस की स्वराज्य साहित्य माला से धन्यवाद सहित उद्धृत।

लेखक

देश में आन्दोलन हो तो कैसे न काम पूरे हो जाया करें। सभाओं द्वारा बृटिश न्याय और बृटिश सत्यप्रियता से अपील की गई। साफ़ शब्दों में कह दिया गया कि यदि हमारे तीनों नेता कि जिन्हें सरकार ने उटकमंड पहाड़ की चोटी पर कैद कर रखा है न मुक्त किये जावेंगे, तो देश में शांतिभगं का अंदेशा है, और यदि शीघ्र ही अब इस बात का विश्वास न दिलाया जायगा कि इंगलेंड का उद्देश भारत वर्ष को शीघ्रही स्वराज्य देने का है तो देश में संतोष और सरकारी कामों से सहानुभूति अब नहीं हो सकती। आन्दोलन का फल होकर ही रहता है। भारत सचिव मि० चेम्बरलेन ने अपने पद से इस्तीफा दिया और उदार हृदय सत्यप्रिय मि० मांटेग्यू भारत सचिव नियुक्त हुये। नये भारत सचिव मि० मांटेग्यू ने बृटिश पार्लियामेंट में २० अगस्त १९१७ को यह घोषणा की कि इंगलैंड की सरकार की (जिससे भारत सरकार भी पूर्णतयः सहमत है) यह नीति है कि शासन के प्रत्येक विभाग में भारत वासियों को दिन पर दिन अधिक भाग मिले और धीरे २ ऐसी संस्थाओं की उन्नति की जाय कि जिससे भारतवर्ष को बृटिश छत्र छाया में स्वराज्य मिलजावे। इंगलेंड की सरकार ने यह भी निश्चय कर लिया है कि इस लक्ष की ओर जितनी जल्दी हो सके कार्य आरंभ कर देना चाहिये।"

साथ ही साथ भारत सचिव ने यह निश्चय करने के लिये कि इस घोषणा को किस प्रकार कार्य में परिणित करना चाहिये और भारतीय स्वराज्य की पहली किश्त क्या होना चाहिये स्वयं भारत वर्ष में शीघ्र ही आकर भारत सरकार

व प्रजा प्रतिनिधियों से परामर्श करने का बचन दिया। इस घोषणा और ऐसी सदेच्छा से प्रजा में संतोष हुआ नौकर शाही के निरन्कुश शासन की चिन्ता मिटी, बृटिश उदारता में कुछ विश्वास बढ़ा, और भविष्य में कुछ भली आशा में देख पड़ने लगीं। इसी समय में हमारे तीनों नेता कैद में थे छोड़ दिये गये। हमें इस विचार से सुख हुवा कि नौकर शाही नहीं बरन् उस इङ्गलेंड से हमारा सम्बन्ध है जिसमें क्रामवेल, हेम्पडन, पिम, मिल्टन और शैली ने जन्म लिया है, जिसने मेज़नी के आपत्तियों से घिरे जीवन को आश्रय दिया, जिसने इटली के उद्धार कर्ता गेरीवाल्डी का उसके हज़ारों साथियों सहित स्वागत किया, जिसने राजनैतिक शरणागत लोगों को सदैव शरण दी, जिसने क्रोपैटनिक की रक्षा की। ऐसे इङ्गलेंड से इज्जत के साथ संबन्ध रखने में हम अपना गौरव मानते हैं।

आन्दोलन शांत हुवा, श्रीमती एनीबेसेंट की मुक्ति में सारे देश में उत्सव मनाया गया, और भारत सचिव मि० मांटेग्यू के स्वागत की तैय्यारियां होने लगीं। नवम्बर में भारत सचिव भारतवर्ष में पहुंच गये। यहां भारत सरकार, प्रांतीय सरकारों और इन्डियन नेशनल कांग्रेस व मुसलिम लीग व अन्य सन्स्थाओं के प्रतिनिधियों से परामर्श किया।

पिछले वर्ष के आन्दोलन और श्रीमती एनी बेसेंट की रिहाई में श्रीमान मालवीय जी का बहुत ही बड़ा भाग था। आप बराबर अधिकारी वर्ग को सख्तियों के लिये आगाह करते रहे जब श्रीमती एनीबेसेन्ट अपने साथियों समेत इन्टर्न करदी गईं तब आप शिमला गये और वहां वाइसराय

की कौंसिल को समझाया वहां असफलता होने पर आपने देश भर में दौरा किया और भारतीय नेताओं को दल बांध कर सरकार की इस भारतीय आशाओं में दवाने की नीति का जोर के साथ विरोध करने के लिये तैय्यार किया। इसी युक्ति से अंत में सफलता हुई। आँदोलन ने मन वांछित काम किया। भारतसचिव के आने पर कांग्रेस के प्रतिनिधि दल के साथ श्रीमान् मालवीय जी ने जाकर भारतसचिव को भारतीय दशा और आवश्यकतायें युक्ति और प्रमाण सहित समझाईं।

भारतवर्ष से लौट कर भारत सचिव मांटेग्यू साहेब ने सुधार का मसविदा सर्व साधारण के सामने उपस्थित किया है। इन प्रस्तावित्रिक सुधारों से भारतवर्ष की दशा वर्तमान दशा से निश्चय ही कुछ न कुछ सुधर जावेगी, परन्तु जब तक मुख्य विभाग भारतवासियों के हाथ में न आजावेंगे, और भारत सरकार में पूरे २ सुधार करके भारतवासियों को अपने देश के संबन्ध की पूरी बातों के निश्चय करने का अधिकार न मिल जावेगा, तब तक किसी प्रकार के विशेष लाभ होने की आशा नहीं है। अब समय यह है कि संसार में उसी देश के लोगों की इज्जत होगी कि जिनको अपने देश में पूर्ण नागरिकस्वत्व प्राप्त है, जिन्हें अपने देश के भले और बुरे के निर्णय करने का स्वत्व प्राप्त है। बंबई की विशेष कांग्रेस भी इसी आशय के प्रस्ताव पास किये गये थे उनमें के "कुछ प्रस्ताव ऐसे हैं कि जिनसे वर्तमान दशा कुछ सुधर जावेगी" परन्तु पूरे सुधार स्कीम के विषय में यहां कहा जा सकता है कि "वह असंतोषप्रद और निराशाजनक है।"

श्रीमान् मालवीय जी ने भारतीय व्यवस्थापक सभा में ७ सितंबर १९१८ को इसी सुधार योजना पर वक्तृता देते हुवे कहा था कि "सुधार के प्रस्तावों से वर्तमान दशा तो निश्चय ही सुधरती है परन्तु शिकायत हमारी यह है कि जितनी चाहिये उतनी हमारी दशा नहीं सुधरती, और न हमारे देश में सुधार की जो ज़रूरत है वही पूरी होती है।"

"आपके विचार में यह बात आई होगी कि प्रांतीय सुधार के प्रस्तावों के विषय में सब लोगों का एक ही मत है।"........"मैं कहता हूं कि भिन्न मत और विचारों के मनुष्य में इस बात में कोईभेद नहीं है कि भारत सरकार के सुधार में भी वैसी ही उदारता की नीति वर्ती जानी चाहिये जैसी कि प्रांतीय सर कारों के सुधार में बर्ती गई है--अर्थात् मेरे कहने का आशय यह है कि भारत सरकार में भी उत्तरदायत्व पूर्ण शासन उसी प्रकार आरम्भ हो जाना चाहिये जैसा कि आप और सहयोगियों ने प्रांतों के लिये विचारा है।"......"हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि आपने प्रांतों के लिये निसन्देह उन्नति कारी सुधार विचारे हैं।"......"सत्य हृदय से मैं कहता हूं और मुझे आशा है कि इसमें आप भी सहमत होंगे कि उन्नति की गति जो आपने व भारत सचिव ने विचारी है; भारतवर्ष और साम्राज्य के हित के विचार से इससे अधिक तीव्र और वास्तविक होनी चाहिये।"

॥ इति ॥

ओंकार बुकडिपो (पुस्तक भंडार)--प्रयाग।

सब सज्जनों की सेवा में निवेदन है कि ओंकार बुकडिपो नामक एक बृहत् पुस्तकालय प्रयाग में खोला गया है। जिस में हिन्दी साहित्य की सब प्रकार की पुस्तकें विक्रयार्थ रक्खी जाती हैं। कन्याओं तथा स्त्रियों के लिये तो जो संग्रह इस पुस्तकालय में किया गया है वैसा शायद सारे भारतवर्ष भर में न होगा। बालक और बालिकाओं को इनाम देने के लिये सब प्रकार की उत्तम और शिक्षाप्रद पुस्तकें यहां मिलती हैं उच्च कक्षा के हिन्दी साहित्य प्रेमियों के लिये तो यह पुस्तकालय भण्डार ही है। यही नहीं इस पुस्तकालय का अपना प्रेस भी है। अंग्रेज़ी हिन्दी और उर्दू का सब प्रकार का टाइप मौजूद है। इसमें हिन्दी भाषा की उत्तमोत्तम पुस्तकें छापी जा रही हैं। हिन्दी भाषा के लेखक जो उत्तम पुस्तकें स्वतंत्र लिखें या अनुवाद करें और प्रकाशन का भार ओंकार बुकडिपो को देना चाहें, वे कृपा करके मेनेजर से पत्र व्यवहार करें। कमीशन एजेंट जो हमारी पुस्तकें बेचना चाहते हैं वे भी पत्र व्यवहार करें उनको उचित कमीशन दिया जायगा।

मेनेजर ओंकार बुकडिपो, प्रयाग

कन्या-मनोरञ्जन

एक अनोखा सचित्र मासिक पत्र

कन्याओं तथा नव बधुओं के लिये कन्या मनोरञ्जन एकही अद्वितीय सचित्र मासिक पत्र है। यदि आप को अपनी पुत्रियों बहिनों तथा नवबधुओं को विद्यावती, गुणवती, मधुरभाषिणी और सदाचारिणी बनाना है तो आप कन्यामनोरञ्जन अवश्य मँगाइये। मूल्य भी ऐसे उत्तम मासिक पत्र का केवल ॥) साल है डांक महसूल सहित ८ पैसे मासिक पड़ते हैं।

मेनेजर कन्या-मनोरञ्जन प्रयाग।

ओंकार आदर्श-चरितमाला

प्रयाग के

ग्राहक बनिये ! **अवसर न चूकिये !!**

यदि आप धार्मिक, वीर, साहसी, परिश्रमी, विद्वान् देशभक्त, सदाचारी, और उद्योगशील बनना चाहते हैं तो "ओङ्कार-आदर्शचरित-माला" के अनुपम ग्रन्थों को पढ़िये और दूसरों को पढ़ाइये।

संसार के ४०० प्रसिद्ध महात्माओं के जीवन चरित

प्रत्येक में १०० से लेकर २५० पृष्ठ तक होते हैं

मूल्य ।=) स्थाई ग्राहकों से ।-) प्रवेश फ़ीस ॥)

प्रति मास में २ पुस्तकें प्रकाशित होती हैं

निम्नलिखित जीवन चरित तैयार हैं

१—स्वामी विवेकानन्द	।=)	१४—महात्मा टाल्सटाय	।=)
२—स्वामी दयानन्द	।=)	१५—दादाभाई नौरोजी	।=)
३—महात्मा गोखले	।=)	१६—श्रीमती एनी बीसेन्ट	।=)
४—समर्थ गुरु रामदास	।=)	१७—ईश्वरचन्द्र विद्यासागर	।=)
५—स्वामी रामतीर्थ	।=)	१८—रमेशचन्द्र दत्त	।=)
६—महाराणा प्रतापसिंह	।=)	१९—छत्रपति शिवाजी	।=)
७—आत्मवीर सुकरात	।=)	२०—राजा राम मोहनराय	।=)
८—गुरु गोविन्दसिंह	।=)	२१—जे० एन० टाटा	।=)
९—नेपोलियन बोनापार्ट	।=)	२२—लाला लाजपतराय	।=)
१०—धर्मवीर पं० लेखराम	।=)	२३—मार्टिन लूथर	।=)
११—महात्मा गान्धी	।=)	२४—गौतम बुद्ध	।=)
१२—मि० ग्लैडस्टन	।=)	२५—राजर्षि भीष्म पितामह	।=)
१३—पृथ्वीराज चौहान	।=)	२६—स्वामी शङ्कराचार्य	।=)

२७—पं० मदन मोहन मालवीय ।=)

मिलने का पता—ओंकार बुकडिपो प्रयाग